विदेशों का वैभव

(पश्चिम के विभिन्न उन्नत देशों के सौंदर्य और वैभव का
आँखों-देखा वर्णन)

लेखक
रामेश्वर तातिया, संसद्-सदस्य

प्रकाशक
इंडियन प्रेस (पब्लिकेशंस) प्राइवेट लिमिटेड,
इलाहाबाद
१९६५

मूल्य ३.५० पैसे

प्रकाशक
बी० एन० माथुर
इंडियन प्रेस (पब्लिकेशन्स) प्राइवेट लिमिटेड इलाहाबाद

●

प्रथम संस्करण
१९६५

●

मुद्रक
पी० एल० यादव
इंडियन प्रेस, प्राइवेट लिमिटेड इलाहाबाद

भूमिका

बचपन म जब मैं हाई स्कूल म था, पाठ्य पुस्तका म दश विदेश सम्बधी वणन भी रहता था। विदशा में लागा का भाषा, रीति-नीति, और रहन-महन आदि के बारे में जानने का रुचि होती थी। चाव बढ़ता गया और म यात्रा सम्बधी जो भी पुस्तक मिली, पढ़न लगा। ह्वेन साग और इब्नबतूता की यात्राए मुझे बहुत अच्छी लगती था। एसा लगता था कि म भी उनक साथ-साथ हा भ्रमण कर रहा हू। इसके बाद स्वामी सत्यदेवजी परिव्राजक और राहुल जी की यात्रा-पुस्तकें पढन को मिली दुनिया का समझने परखने का एक नया दृष्टिकोण मिला। स्वदेश तथा विदेश के तुलनात्मक विवचन की प्ररणा भा मिली। साथ ही स्वदेश के सिवाय दूसरे देशा की यात्रा की उत्कट इच्छा होने लगी।

जिज्ञासा मनुष्य की सहज प्रवत्ति है। जानने की प्यास बुझती नहीं। जब बुझ जाती है ता मनुष्य जडवत हो जाता है। उसकी चेष्टाएँ और प्रवत्तियाँ कूप मण्डूकी हो जाती हैं। भारतीय सस्कृति में इसी कारण जिज्ञासा और जिज्ञासु दोना का महत्व दिया गया है। ज्ञान की प्राप्ति क लिए यात्रा पर अपक्षित बल भी दिया गया है।

भारतीय जीवन की पूणता वानप्रस्थ और सन्यास स मानी जाती थी। इन्हा दाना आश्रमा में तीर्थाटन द्वारा सत्य का जानने और पहचानने का निर्देश था। इसीलिए हमार मुख्य तीथ बद्रीनाथ, रामेश्वर, द्वारिका और पुरी देश के चारा कोना पर थे। इन तीर्थों म जाना हमारा सामाजिक राष्ट्रीय धम का एक अग माना जाता रहा है और यहा तक मान्यता रही है कि बिना चारा धामा की यात्रा के मनुष्य को मोक्ष नहा मिलता।

भ्रमण और देशाटन क प्रति प्रम, प्ररणा और रुचि क फलस्वरूप ससार की विभिन्न सस्कृति और सभ्यता का विभिन्न सामग्री का मथ कर सास्कृतिक नवनीत बनान का जितना व्यापक प्रयोग हमार इतिहास में मिलता ह उतना विश्व क किसी भी देश में नहा।

आज स ढाइ हजार वष पहल जब न तो यातायात क सुगम साधन ही थे और न सुरक्षा की उचित व्यवस्था ही परन्तु उस समय भी सम्राट अशोक को

पुनी सुदूर देशों में गई। आज भी यही परम्परा है भले ही शांति और सत्य रूप में हो।

हजार वर्ष की दासता के फलस्वरूप भारत को किसी बात की आवश्यकता है तो यह है कि भारत को जीवित रखने के लिए इस पृथ्वी पर अपने आपको प्रतिष्ठित करे। यह तभी सम्भव है जब यह अन्य राष्ट्रों की उन्नति उनके कारण और परिस्थितियों को समझे और इस संयोग मानकर अपने कदम आगे बढ़ाए ताकि हमारी भूमि और हमारी संस्कृति परिमार्जित हो और उसमें निखार आए।

१९५० में मुझे पश्चिमी देशों में जाने का अवसर मिला। प्रस्तुत पुस्तक में उन्हीं यात्राओं के संस्मरण हैं। जिन देशों में गया उनके पुरातन और नवीन दोनों रूपों को समझने की चेष्टा की साथ ही अपने देश के साथ उनकी तुलनात्मक अध्ययन का भी प्रयास किया।

मेरा यह प्रयास कैसा बन पाया और आपको कैसा लगा यह नहीं जानता। स्वर्गीय श्री—श्री मैथिलीशरण गुप्त—का आदेश था भाई इसको सबके लिए लिखना सब समझें—ऐसा हो—इसी प्रेरणा से लिखता रहा। उन्होंने ही इसका नामकरण किया था "विश्व का वैभव" और भूमिका लिखने की भी स्वीकृति दी थी परन्तु ईश्वर को यह स्वीकार नहीं था।

पंडित श्रीनारायणजी चतुर्वेदी के आग्रह से यह पुस्तक के रूप में है, इसके लिए आभारी हूँ। यदि आपको अच्छी लगी तो मुझे प्रोत्साहन मिलना स्वाभाविक है। साहित्यिक नहीं हूँ हाँ साहित्यानुरागी अवश्य हूँ। और इस युग के बड़े से बड़े साहित्यकारों के निकट रहने का सौभाग्य प्राप्त रहा है।

आपके सुझाव का स्वागत है ताकि अगली पुस्तक में समन्वय कर सकूँ। सन १९६१ और १९६४ में दूसरी और तीसरी बार विदेशों में गया रूस बर्मा मलाया हांगकांग जापान हवाई द्वीप और अमरिका का एक सिरे तक देखा और वहाँ भी जो कुछ देख सुन आया वह आपके मनोरंजनार्थ शीघ्र प्रस्तुत करूँगा।

जन भारती के अमूल्य एवं विशाल कोष में यह अटपटी अध्य स्थान पा गया तो अपना श्रम सार्थक समझूँगा।

—लेखक

क्रम-सूची

विषय	पृष्ठ
१—परियों की नगरी पेरिस में एक रात	१
२—कला और संस्कृति का केन्द्र भ्राम	६
३—गिरजा और शाला के बीच	१२
४—पाम्पियाई की भस्म-समाधि पर	१९
५—रोम—यूरोप की प्राचीन पुरी में	२४
६—निशा-सूर्य के देश में	३०
७—समुद्र विजेता देश	३८
८—भूताक का नन्नकानन	४७
९—सबसे ऊँची ट्रेन सबसे लम्बी सुरंग	५४
१०—सुकरात और सिकन्दर के देश में	६१
११—पिरामिडों के देश में	६७



विदेशों का वैभव

परियों की नगरी पेरिस में एक रात

लन्दन से पेरिस, वायुयान द्वारा सिर्फ दो घण्टे का सफर है। दृष्टि खिड़की से बाहर थी। कहीं-कहीं रुई जैसे बादलों के ढेर दिखाई पड़ रहे थे, किन्तु मन की दृष्टि पेरिस पर थी।

पेरिस! फ्रान्स की राजधानी! फ्रांस! वह देश जो आधुनिक पाश्चात्य विचारधारा का प्रवर्तक है। वाल्टेयर, रूसो, विक्टर ह्यूगो, अनातोले फ्रान्स, रोमारोला और बाल्जक का देश फ्रान्स! पश्चिम को समता, बन्धुत्व और स्वाधीनता का पाठ पढ़ाकर साहित्य, संस्कृति और राजनीति को एक नयी दिशा देनेवाला फ्रान्स! पेरिस! फ्रान्सीसी लोग उसे 'पारी' कहते हैं। 'पारी' नहीं, वह 'परी' है—सजीली छबीली चिरयौवना! सीन नदी के दर्पण में वह अपना सौन्दर्य देखती है, मुस्कुराती है और इठलाती है। राजनीति बदलती रही, सत्ता हस्तांतरित होती रही, पर 'परी' मुस्कुराती ही रही।

सोचने लगा—रोम और एथेन्स का वैभव काल को विजित न कर सका किन्तु पेरिस? इसको तो निराली ही जन्मघुटी मिली है। तीन-तीन बार जर्मन तोपें गरजीं, इसके सीने से टकराईं पर इसकी मुस्कान बंद न कर सकीं। यह हँसती ही रही और आज भी इठला रही है।

पेरिस की मीनारें दिखाई देने लगीं। वायुयान की परिचारिका की आवाज आयी—'हम पेरिस पहुँच रहे हैं।' कुछ ही क्षणों में वायुयान पंख तौलता हुआ पेरिस की धरती चूमने लगा। कौतूहल बल्लियों उछल रहा था। वायुयान एक हल्की सी उछाल के बाद स्थिर हो गया।

सीढ़ियों से उतरने लगा। शाम की ठंडी हवा के एक झोंके ने कहा—'यह पेरिस है। कदम जरा सँभाल कर रखना।'

पूर्व निश्चित होटल में पहुँचकर यात्रा की क्लान्ति दूर की। इस यात्रा में मेरे पास पेरिस घूमने के लिए समय कम था। लंदन में ही तय हो गया था कि सबसे पहले पेरिस की रात देखी जाय। भोजनादि से निवृत्त होकर घूमने निकला। चौड़ी सड़कें, दोनों ओर वृक्षों की कतारों के पीछे बादलों को

धेरती हुई मीनारें गुम्बज की चोटियाँ। बिजली के प्रकाश म माना पेरिस की गजधज से प्राँखें चौंधिया रही थी। स्त्री-पुरुष मौज म मस्त जा रहे थे। दूकानें तो मानो सजी हुई दुल्हनी ही हों। कोई इस मन्दर मायाम क्षण तो रुकी या कि ग्राँखें तरसती ही रह जाती। द्वारपाल गणवेशयुक्त गन्धर्व जैसे लगते थे। भडकीली पोशाकें ऊँचे कालर, उठा हुआ मस्तक और तना सीना। कोई ताज्जुब नहीं यदि इन दूकानों से गुजरते हुए आदमी का अपना उम्र म उमंग पाताल म भी कुछ कुछ दिखाई पड जाय। माण्टमार्त्र नाम की विश्वविख्यात सड़क की दूकानों को देखता हुआ आगे बढ रहा था। समाज की सबसे प्रसिद्ध दूकानें और सबसे चतुर एव व्यवहार-कुशल दूकानदार यहां देखने में आते हैं।

रात्रि के दस बज रहे थे पर पेरिस की शाम का अभी आरम्भ ही हुआ थी। पेरिस की शाम मशहूर है। जहाँ वहां आमोद मौज मस्ती के लिए सभी साधन मौजूद है—कानून का कोई प्रतिबन्ध नहीं। ओपेरा, थियेटर सिनेमा तो सभी शहरों म है, किन्तु पेरिस के 'रात्रि-क्लब' और 'कैफे' इस इन्द्रपुरी की अपनी ही विशेषताएँ है। इन क्लबों की संख्या काफी है। आपकी जेब भारी चाहिए फिर जैसी इच्छा हो क्लब चुन लीजिए। रात हसते खेलते आमोद प्रमाद म गुजर जायगी।

म इसी तरह का एक रात्रि-क्लब देखने जा रहा था। अचानक किसी ने पीछे से आकर पूछा महाशय कैसा लगा पेरिस?

अभी तो देख रहा हू —मैंने उत्तर दिया।

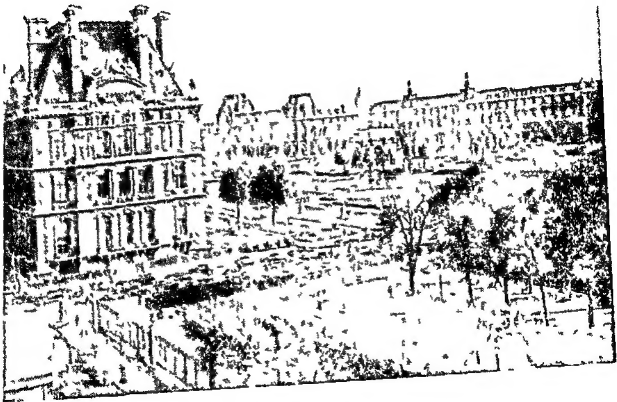
उसने तुरत ही कहा आप पेरिस की कलात्मक चीजें भी देखना पसन्द करेंगे?

'अवश्य! किन्तु महाशय मुझे तो जोरों की प्यास मालूम पड रही है।

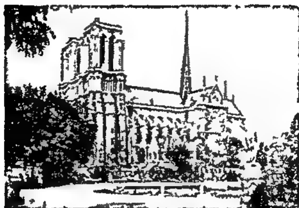
उस भले आदमी ने एक मन्द भरी मुस्कान के साथ मेरी ओर देखा और पास ही के एक रेस्तराँ म ले गया मुझसे पूछा 'कौन सी शराब पसंद करेंगे?'

मैंने उसे बताया 'म शराब नहीं पीता अलबत्ता दूध या चाय पी लूँगा।

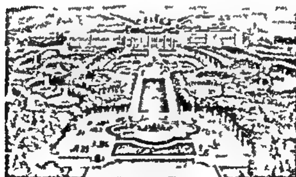
पेरिस के उस देवदूत ने बड तपाक से मेरे लिए दूध का आर्डर देते हुए अपने लिए शराब की फरमाइश कर दी। कहना नहीं होगा कि मुझ ही दोनों का बिल चुकाकर अपनी जेब कुछ हलकी करनी पडी। शराब पीते हुए उसने अपनी जेब से कई तरह की अश्लील तस्वीरों का एक लिफाफा निकाला, परन्तु मेरी बेरुखी देखकर बेचारा चुप रह गया। पर उसने हिम्मत नहीं हारी कहने लगा



पेरिस का लूव्र राजमहल



परिस का नात्रदम गिरजाघर



वामाई का उद्यान और फव्वारे

'महाशय, पेरिस है और जीवन है। दुनिया के किसी भी कोने के आनन्द प्राप्ति के दुर्लभ से दुर्लभ साधन भी यहाँ मनुष्य को सहज प्राप्य हैं। लोग पेरिस आते ही इसीलिए हैं। यहाँ मनुष्य तो क्या पत्थर की प्रतिमाएँ भी बोलती हैं।

इसी दौरान उस लिफाफे में एक मस्ताभरी नव-यौवना की तस्वीर निकाल कर दिखाते हुए कहने लगा 'इसे देखिए, यह मेरी भतीजी है। इसका भारत तथा उसके निवासियों के प्रति बड़ा रुझान है। बहुत अच्छा रहे कि जब तक आप पेरिस में हैं इसके साथ भी कुछ समय बिताएँ। परन्तु मैं पेरिस के ऐसे बिना पहचान हुए मित्रों से पहले ही से सावधान था इसलिए 'माफिए' का अन्य बाद भर देता हुआ रात्रि-क्लब के लिए आगे बढ़ गया।

पेरिस के रात्रि-क्लबों में नाम लुक छिपकर नहीं जाते। एक ही क्लब में भाई-बहिन, पिता-पुत्र और माँ-बेटी निःसंकोच भाव से पीते या नाचते हुए मिल जाते हैं। वहां बड़े-बड़े राजनीतिज्ञों, कलाकारों, लेखकों और विचारकों को देखकर भी आपको आश्चर्य नहीं होना चाहिए। पति पत्नी को भी आप वहाँ पायेंगे, किन्तु अलग अलग जोड़ों में नाचते हुए।

मध्यम स्तर के एक क्लब के फाटक पर पहुँचा। सुसज्जित द्वारपाल वर्दी पहिने खड़ा था। मुझे देखकर उसने बड़े अदब के साथ दरवाजा खोला और जरा झुका। मैं अन्दर चला गया। पास ही काउन्टर पर बैठी एक युवती ने मन्दभरी मुस्कान के साथ अँगरेजी में ओवरकोट और टोपी रखने के लिए माँगी। ओवरकोट की जरूरत न थी, कारण बाहर जैसी सर्दी अन्दर न थी। इमारत ताप नियन्त्रित थी।

क्लब का प्रवेश-शुल्क भारतीय मुद्रा के हिसाब से ६ रुपये चुकाकर ऊपर हाल में गया। फर्श पर मोटे रुँयेदार नर्म गलीचे, छतों से लटकती हुई बनिस्बत कीमती बिल्लौरी शीशे की बड़ी-बड़ी फानूसें तथा दीवारों पर कीमती चित्रों और आदम-कद आईनों आदि से ऐसा लगता था मानो मध्य-युग का कोई भव्य राज प्रासाद हो। फर्क केवल इतना ही था कि जहाँ उस समय के राज प्रासादों में केवल एक दो रंग के लोग दिखाई पड़ सकते थे, वहाँ बीसवीं सदी के इस राज प्रासाद में विभिन्न देशों के लोग आनन्द ले रहे थे।

सामने से एक वेटर आया। उसने झुककर सलाम करने के बाद एक खाली कुर्सी की ओर बैठने का संकेत किया। मेरे मस्तिष्क में नाना प्रकार के प्रश्न चक्कर काट रहे थे। रात का सूर्य देखा लेपलैण्ड में नन्दन कानन की छटा देखी

स्विट्जरलैण्ड से आये सब गायक; इन्द्र का दरबार लग रहा है मानो । सबके सामने टेबिल पर मदिरा के प्याले थे और आँखों में खुमारी । मानो सारा वातावरण ही मदिरामय हो । सामने ही एक बड़ा मंच था, जिस पर संगीत की हर ताल पर पूर्ण और अर्ध-नग्न सुन्दरियाँ थिरकती हुई नाच रही थीं । लखनऊ के पुराने नवाब वाजिदअली शाह की विलासिता का हाल पढ़ा था । वह इतिहास की घटना थी । पर जो मैं यहाँ देख रहा हूँ इसके सामने वह एक खिलवाड़ हो रहा होगा । इन्हीं विचारों में खोये-से रहा था कि दो सुन्दरियाँ बगल में आ बैठीं । उन्होंने निःसंकोच भाव से जैसे मेरी उनसे बरसों की जान पहचान रही हो । वेटर ने आकर सलाम से शराबों की एक लम्बी फेहरिस्त पेश की । ऊपर से नीचे तक कई तरह की शराबों के नाम और दाम लिखे हुए थे । दाम बाजार से दस गुना अधिक था । मैंने वेटर से कहा कि मैं शराब नहीं पीता । वेटर ने बड़े आश्चर्य से देखा और तुरन्त ही हेड-वेटर को बुला लाया । उसने बड़े ही नम्र भाव से कहा — कोई बात नहीं । सुरा न सही सुन्दरियाँ तो हैं । सुरापान के बगैर भी मनोरंजन अधूरा होगा । परन्तु इस बात पर भी मेरे राजी न होने पर उसने अपने निचले होठ को जरा विचारपूर्वक दबाया और ऊपर की ओर सिर उठा लिया फिर उसी नवाबी और विनम्रता के साथ कहा — महाशय, सुरापान न करनेवालों के लिए वह सामने की गैलरी है, जहाँ से खड़े होकर नाच देखा जा सकता है । इस प्रकार के भैरवी चक्र से बच रहने के लिए मैंने गैलरी में खड़े रहने में ही अपनी और अपने बटुए की भलाई समझी ।

प्रायः घंटे भर गैलरी में रहा । एक लेमनेड पिया । दाम चुकाना पड़ा ६ रुपया । यहाँ से सारे हॉल की रंगरलियों का दृश्य बखूबी देखा जा सकता था । सभी यौवन और मदिरा के नशे में झूमते हुए आनन्द ले रहे थे । सभी जिन्दगी के इस पार की ही फिक्र में थे । उस पार की बात सोचने की फुरसत किसे थी ?

चित्त एकाएक ऊब गया और होटल की ओर लौट पड़ा । मध्य रात्रि का समय था । सड़कों पर भीड़ नहीं थी, पर लोग चल फिर रहे थे । रास्ते में भी कई महिलाओं ने अभिवादन किया । क्यों ? — मन में आया भी कि यह प्रश्न पूछूँ पर फ्रेंच नहीं जानता था । मैंने एक स्त्री को तो अंगरेजी में जवाब भी दिया — मेरे पास पैसे नहीं है — आपको निराशा होगी । उसका जवाब था कितने हैं ?

मैं तेजी से कदम बढ़ाता हुआ आगे निकल गया ।

होटल पहुँचकर कपड़े बदले और बिस्तर पर लेट गया। कुछ शान्ति अनुभव की। इतने अल्प समय में परियों व पेरिस का जो दृश्य सामने आया उसने मस्तिष्क को सोचने के लिए काफी सामग्री दी। यही वह नगरी पेरिस है, जहाँ सऊदी अरब के अमीर और ईरान के शाह तेल की रायल्टी से प्राप्त धन को पानी की तरह बहाने के लिए आते रहते हैं? अपने देश की बातें याद आ गई। राजे-महाराजे, रईस और जमींदार भी कभी इस पेरिस में गरीब प्रजा की गाढ़ी कमाई को दोनों हाथों लुटाते थे। कभी-कभी तो पेरिस के किसी विख्यात क्लब में एक ही रात्रि का उनका बिल लाखों रुपए तक पहुंच जाता था। यही कारण है कि आज भी भारतीयों के पीछे पेरिस की सुन्दरियाँ दौड़ती रहती हैं। उन बेचारियों को क्या मालूम कि अब न वे राजे-महाराजे रहे और न रजवाड़े। सामन्तशाही के अवसान से जनता को तो खेद हुआ ही पर यहाँ की परियों और दूकानदारों को भी कम दुःख न हुआ होगा।



कला और सस्कृति का केन्द्र फ्रांस

रात्रि-कला का माहौल पेरिस का इकतरफा पहलू है। फ्रांस और पेरिस को केवल एययाशी नाच और गौन की जगह समझना भारी भूल होगा। संसार प्रसिद्ध नेपोलियन और फोश जैसे वीर, जौन आफ आर्क जैसी वीरांगना, वाल्टेयर और राम्पियर जैसे राजनीतिज्ञ, ड्यूमा, बाल्जक, ह्यूगो, अनातोल फ्रांस और एमिल जोला जैसे साहित्यकार इसी भूमि में पैदा हुए हैं।

दूसरे दिन तडके ही उठा। नाश्ता-पानी किया। आज पेरिस का दूसरा रूप देखना था। उस नगरी का जो परी, जहां कला, फ्रांसीसी संस्कृति, सभ्यता और चतना का उद्गम है। उस पेरिस को देखना था जिसने बडे बडे विचारक कलाकार, लेखक और शिल्पी पैदा किये हैं, जिसके विश्वविद्यालय में दीक्षित होने आज भी हजारों विद्यार्थी विदेशों से आते रहते हैं।

इस उद्देश्य से टामस कुक की पैसेंजर बस का एक टिकट १५ रुपये में लिया। इसमें सबसे बडी सुविधा यह थी कि अंगरेजी में सब बातें समझानेवाला एक गाइड भी साथ रहता है। चालीस पचास यात्री आराम से बैठ सकते हैं। सुबह नौ से बारह बजे दोपहर तक और फिर दो से छः बजे शाम तक बस पेरिस के मुख्य मुख्य दर्शनीय स्थानों का चक्कर लगा लेती है। इसमें स्थानों को अपनी इच्छानुसार देखने का सिलसिला तो नहीं बन पाता और न किसी स्थान विशेष को अधिक समय तक देखने का अवसर ही मिल पाता है, फिर भी बहुत कम खर्च में इतने सारे स्थान एक ही बार में देख लेने की बडी सहूलियत हो जाती है। कई यात्रियों से परिचय-लाभ का भी अच्छा अवसर मिल जाता है। हां, यदि किसी स्थान को विशेष रूप से देखने की इच्छा हो, तो उसे दूसरी बार अलग से जाकर देखा जा सकता है।

सबसे पहले इताल पहुंचा। यहां से बारह सडकें निकलती हैं। ठीक बीचोबीच साए लेजा का एक वृत्ताकार उद्यान है। इसी उद्यान के केन्द्र में विजयतोरण है जिसे सम्राट नेपोलियन ने अपनी विजय के स्मारक-स्वरूप बनवाया था। १६४ फुट ऊंचा फ्रांस का यह स्मारक अपने देश के गौरवमय इतिहास के उस पृष्ठ की याद दिलाता है जब साधारण परिवार में उत्पन्न होनेवाले एक असाधारण

बार न यूरोप के बड़े-बड़े सम्राटों का दर्प चूर कर दिया था। फ्रांस के लोग विलासप्रिय है, किन्तु वे तलवार के धनी भी हैं। वे अपने देश के लिए, भारत के राजपूतों की तरह जान हथेली पर रखकर मृत्यु से खेलना भी जानते हैं। इस विजय-तोरण के चारों कोनों पर चमकीली धातु में बनी चार भव्य मूर्तियाँ हैं जिनमें कलाकारों ने प्रस्थान, विजय, शान्ति और प्रतिरोध की भावनाओं को अपनी कल्पना के अनुसार मूर्त रूप दिया है। इन मूर्तियों की कारीगरी और कला को देखकर फ्रान्स की अठारहवीं शती की कला का उत्कर्ष प्रत्यक्ष सामने आ जाता है। संसार प्रसिद्ध शाए-लेजा नाम की सड़क यहां से निकलती है जो संसार भर में अपनी सुन्दरता के लिए प्रसिद्ध है। मैंने यूरोप के प्राय सभी देशों का भ्रमण किया है। ज्यूरिच, स्टाकहोम, कोपनहेगन, हेग और ब्रूसेल्स आदि सुन्दर से सुन्दर शहरों को देखा परन्तु इतनी सुन्दर सुविस्तृत सड़क कहीं भी देखने में नहीं आयी। बीच में सवारियों के लिए बहुत चौड़ा रास्ता, दोनों तरफ वृक्षों की कतारें और उनके बाद पैदल चलनेवालों के लिए दोनों तरफ रास्ते, और फिर बड़ी-बड़ी दूकानें—जिनमें सुई से लेकर हीरे-जवाहरात तक खरीदे जा सकते हैं। सड़क की सफाई और चमक तो इतनी ज्यादा है कि बहुत से विदेशियों को इसके रबड़ की होने का भ्रम हो जाता है। हमारे देश में तो यह मशहूर भी है कि पेरिस में रबड़ की सड़कें है।

इसके बाद प्लेस द ला कन्कार्ड देखा। फ्रेंच सम्राट् लुई पन्द्रहवें ने इस स्मारक को अपनी विजय के उपलक्ष्य में बनवाया था। विधि की कैसी विडम्बना है कि इसी स्मारक के नीचे जनता ने उसके उत्तराधिकारी सोलहवें लुई की गर्दन फरसे से उड़ा दी थी। वास्तु शिल्प और कला की दृष्टि से निःसन्देह पन्द्रहवें लुई का यह स्मारक संसार में एक विशिष्ट स्थान रखता है। मिस्र की विजय के बाद नेपोलियन वहाँ से ७५॥ फुट ऊँचा एक स्तम्भ लाया था। २३० टन के पत्थर का यह स्तम्भ अनुमानतः ३२०० वर्ष पुराना है और इस पर प्राचीन लिपि में कुछ लेख खुदे हुए हैं। इस स्तम्भ को स्मारक के ऊपर खड़ा किया गया है।

इसके बाद हम विश्व का सबसे विशाल और प्रशस्त राज प्रासाद देखने गये जिसे लूव्रे कहते हैं। इसका निर्माण १२०० ई० में प्रारम्भ हुआ और १८७० ई० में यह बनकर तैयार हुआ था। इसके बनाने में लगभग ७०० वर्ष लगे थे। पहले यह एक किला था। बाद में फ्रांस के राजाओं ने इसे महल के रूप में परिवर्तित कर दिया और अब इसके एक भाग में फ्रांस का वित्तमन्त्रालय है और शेष भागों में सात बड़े बड़े संग्रहालय हैं जिनमें विश्व की बहुमूल्य कलात्मक वस्तुओं का

गया है। मोना लिसा का चित्र किन्तु चित्र भी चोरी हो गया था। उसके मुख की रहस्यमयी मुस्कान आज भी स्मृति में आती है। इस चित्र को बनाने वाले लियोनार्डो तथा विभिन्न मूर्तियाँ एक कमरे में रखी गयी हैं।

फ्रांस के विभिन्न राजाओं के जवाहरात यहीं देखे। राजाओं के गहनों के कारण प्राय सभी देशों में एक न एक ही रत्न है ... हीरों का दुरुपयोग और विलासिता। हमारे यहाँ मुगल सम्राट और लखनऊ के नवाब भी इसी कारण गये। किन्तु फ्रांस के राजाओं की प्रजा उनकी विलासिता पर ... क्योंकि जनता ने उन्हें तख्त से ... इनका अन्त में उनकी गर्दनें तक उतारीं।

लूव्र के बाद विश्वविख्यात नात्रदाम का प्राचीन गिरजा देखने गया। एफिल टावर पर से भी इस गिरजे का दृश्य दूर से बड़ा प्रभावशाली लगता है। पेरिस के इतिहास में इसका स्थान बड़ा महत्वपूर्ण है। नेपोलियन का राज्याभिषेक इसी गिरजे में हुआ था। इस गिरजे की दीवारें फ्रांस के अनेक राजाओं और राजकुमारों के विवाहों की साक्षी हैं। नात्रदाम फ्रांस की धार्मिक भावना का प्रतीक लगता है। गिरजे की दीवारों पर माता मरियम, ईसा और अनेक संतों के चित्र अंकित हैं। खिड़कियों में रंग बिरंगे पारदर्शी कांचों के टुकड़ों से अत्यन्त सुन्दर चित्र बनाये गये हैं। यह यूरोप की एक मशहूर कला है और इस गिरजे में उसके बहुत सुन्दर नमूने दिखते हैं।

नेपोलियन की कब्र देखकर उसकी स्मृति ताजी हो उठी। फ्रांस का यह साधारण व्यक्ति अपने अदम्य उत्साह, साहस और वीरता से यूरोप की राजनीति का सर्वश्रेष्ठ नायक बन गया। उसने फ्रांस की गलियों में घूमते हुए राजमुकुट को तलवार की नोक से उठा लिया। एक समय ऐसा भी था जब इंग्लैण्ड में माताएं अपने बच्चों को नेपोलियन के नाम से डराकर सुलाती थीं, फिर एक जमाना ऐसा भी आया जब वह अंग्रेजों का कैदी बन गया। अपने देश से बहुत दूर सेंट हेलेना के निर्जन टापू पर कैद में उसकी मृत्यु रहस्यमय ढंग से हुई। अपनी मृत्यु के पूर्व उसने इच्छा प्रकट की थी कि मेरी लाश सीन नदी के किनारे फ्रांसीसियों के बीच दफनाई जाय जिन्हें मैंने जीवन-पर्यन्त प्यार किया है। यह स्पष्ट है कि नेपोलियन के विजय अभियान से फ्रांस का गौरव बढ़ा था। उसके प्रताप के आगे सारा यूरोप झुक गया था। फ्रांसीसियों ने अपने इस राष्ट्रीय वीर की कब्र को जी भर कर सजाकर श्रद्धा और स्नेह अर्पित किया है। जिस जगह नेपोलियन की कब्र है वहाँ एक सैन्य संग्रहालय भी है, जिसको प्रसिद्ध बादशाह लुई चौदहवें ने घायल सिपाहियों के रहने के लिए बनवाया था और इसी कारण

इसका नाम थायना का स्थान है। यहां चर्च ऑफ इनवालिड्स है, जिसके गुम्बद में सोने के ३ ८०,००० पत्र लगे हैं।

दिल्ली की कुतुबमीनार, कलकत्ते का विक्टोरिया मेमोरियल, लन्दन का टावर ऑफ लन्दन, रोम का संत पीटर का गिरजा जिस तरह अपने अपने नगर के प्रतीक हो गये हैं, उसी तरह पेरिस का प्रतीक है एफिल टावर। ११,००० टन लोहे की मीनार के इस ढांचे को खड़ा करने में दो वर्ष का समय लगा था। इसकी ऊंचाई ९८४ फुट है। इस पर चढ़कर सारा पेरिस बखूबी देखा जा सकता है। लिफ्ट से ऊपर चलें। ऊपर एक छोटा-सा रेस्तराँ है। ऊपर से देखने पर पेरिस नगरी खिलौने-सी लगी। कहा जाता है कि पिछले महायुद्ध में विजेता जर्मनी ने इस मीनार के लोहे को गलाकर युद्ध के काम में लगाने की बात एक बार सोची थी, किन्तु आनेवाली पीढ़ियाँ उनका नाम किस प्रकार स्मरण करेंगी यह सोचकर उन्होंने अपना विचार त्याग दिया।

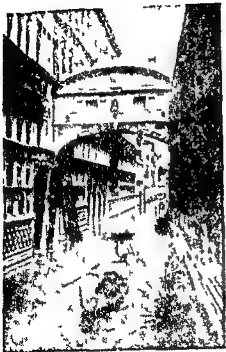
जैसे लन्दन का केन्द्रस्थल पिकाडली सर्कस है इसी तरह पेरिस के सामाजिक जीवन का केन्द्र ओपेरा है। यहाँ चारों तरफ से प्रधान सड़कें आकर मिलती हैं, और बीच में विश्वविख्यात थियेटर ओपेरा है। यह संसार का सबसे बड़ा थियेटर है जिसको बनाने में उस समय भी २॥ करोड़ रुपये लगे थे। इसके साथ ही कलाकारों की ज्ञान-वृद्धि के लिए एक उत्तम संग्रहालय भी है जिसमें नाट्यशाला सम्बन्धी ४०,००० पुस्तकें और ६०,००० चित्र हैं। संपूर्ण भवन संगमरमर के प्रयोग से बना है। इसमें २,२०० आदमियों के बैठने की जगह है। विश्व के बड़े से बड़े कलाकार की भी यह इच्छा रहती है कि उसे इसके रंगमंच पर एक बार अभिनय करने का अवसर प्राप्त हो।

वर्साई पेरिस से बारह मील दूर है। इतिहास में यहां कई करवटें बदली हैं। यहां का राजमहल संसार के प्रसिद्ध राजमहलों में से एक है बल्कि यों कहिए कि वह अपने ढंग का निराला ही है। लुई तेरहवें ने इसे सन् १६२० ई० में बनवाना प्रारंभ किया था। इसके बाद उसके जितने भी उत्तराधिकारी हुए, सभी ने इसके निर्माण में अरबों रुपये लगाये। लाखों लोगों से बेगार ली गयी। राजप्रासाद तैयार हुआ। फ्रांस का सरकारी केन्द्र पेरिस से हटकर वर्साई के महलों में आ गया, जिसमें राज-काज के उत्तरदायी १०,००० अमीर-उमरावों के रहने की व्यवस्था थी। उस समय वर्साई के राजप्रासाद के उद्यान विश्व में अपनी सुन्दरता की सानी नहीं रखते थे। इनकी हरियाली कायम रखने के लिए सीन नदी से नहरें लाने में ही करोड़ों रुपये खर्च हो गये थे।

गिरजों और गोन्दोलों के बीच

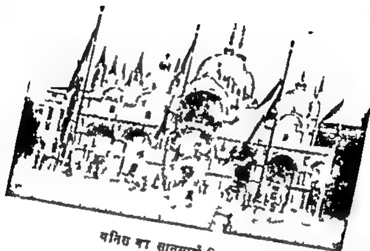
विश्व के नन्दन कानन में विचरण करते समय मन में विचार उठ रहे थे कि सम्पन्न उन्नत ... इत्यादि यूरोपीय शहरों में विविधता एवं वैचित्र्य की कमी नहीं। सभी यूरोपीय शहरों की अपनी अलग अलग रूप हैं अपनी अपनी विशिष्टताएं हैं। मन पर इन सभी शहरों और देशों की अलग अलग प्रकार की छापें पड़ती हैं उनमें अनेकता का भान होता है परन्तु इस अनेकता में एकता का आभास भी स्पष्ट है। जीवन और जीवन की मूल समस्याओं के प्रति पाश्चात्य लोगों के दृष्टिकोण उनकी मन्त्र प्रतिक्रियाओं और उनके तौर तरीकों में मूलतः समानता है। लगता है कि उनके संस्कारों की बुनियाद एक ही है। पाश्चात्य सभ्यता की विभिन्न वल्लरियाँ रोमन और यूनानी सभ्यताओं की मिट्टी और खाद में ही पनपी और पल्लवित हुई हैं।

इसीलिए इच्छा हुई कि रोमा और यूनान को भी अवश्य देखना चाहिए ताकि पाश्चात्य जगत् को थोड़ा और समझने में सहायता मिलेगी। स्विट्जरलैण्ड से रोमन सभ्यता के केन्द्र—रोमा—की ओर उड़ चले। हमारा विमान आल्प्स पर्वतमाला की ऊँची बर्फीली चोटियाँ पार कर मिलान के हवाई अड्डे पर अवतरित हुआ। इन्हीं कुछ यात्रा विवरण प्रस्तुत हो गये हैं।



वनिस की नहर पर 'आ होका पुल' (जल पर गोंदोला)

वेनिस में सानमार्क गिरजे का शीर्ष



वनिस का सानमार्क गिरजा



वनिस के पुराने डाज ड्यूक का महल

मिलान

मिलान के हवाई अड्डे से अपने पूर्व निश्चित होटल में पहुँचा। शहर का नक्शा पेरिस से बहुत-कुछ मिलता-जुलता है परन्तु पेरिस की भव्यता और सजावट तो उसकी अपनी है। इसमें मध्य भाग को केंद्र बनाकर परिधि की तरह दो सड़कें एक दूसरे के समानान्तर चला गया हैं जिनको सारी सड़कें आपस में जोड़ती हैं। प्राय सभी बड़ी सड़कों पर छायादार वृक्षों की कतारें बगल में लगी हुई हैं।

मध्य भाग को ऐतिहासिक मिलान कहना ही अधिक उपयुक्त होगा। यहाँ अधिकांश प्राचीन इमारतें और भग्नावशेष हैं। समय के अभाव ने मुझे उन खण्डहरों के वैभव को सरसरी निगाह से ही देखने का मौका दिया। फिर भी उनको देखते समय मुझे बार-बार यही लगा कि इतिहास ने हमारे देश की तरह यहाँ भी कई बार करवटें बदली हैं। जैसे भारत पर शक, हूण, तुर्क, पठान और मुगलों के आक्रमण गंगा-यमुना की शस्य श्यामला भूमि के कारण होते रहे हैं उसी तरह इटली के लाम्बार्डी के हरे भरे मैदानों ने अपने धन-वैभव के कारण यूरोप के आक्रमणकारियों को सदा आकर्षित किया है। दिल्ली की तरह, नुकीले भालों और प्रचण्ड तलवारों की टक्करें देखने के अनगिनत अवसर मिलान को भी प्राप्त हुए हैं।

मिलान उत्तरी इटली का एक प्रमुख धार्मिक केन्द्र रहा है। शहर के मध्य भाग में स्थित प्राचीन गिरजे, सदियों के मठ और सकरी गलियाँ इतिहास पहले की घटनाओं पर प्रकाश डालती हैं। शहर के इस भाग में वातावरण बिलकुल बदला-सा मिलता है। कुछ देर के लिए उनमें खो जाना पड़ता है। तब ख्याल तक नहीं आता कि हम बीसवीं सदी के किसी आधुनिक शहर में हैं।

वास्तुकला और विशिष्ट सत्ता के कारण प्रत्येक गिरजा अपना पृथक महत्त्व रखता है। मुझे सन्त अम्ब्रोजियो का गिरजा तथा ड्यूमो कैथेड्रल बड़े भव्य एवं आकर्षक लगे। विगत महायुद्ध की विभीषिका के फलस्वरूप सन्त अम्ब्रोजियो के गिरजे को बड़ी क्षति पहुँची है। सन् १९४३ की बमबारी से इसके बड़े अंश ध्वस्त हो गये थे। इस गिरजे का धार्मिक तथा ऐतिहासिक महत्त्व भी है। इसका निर्माण चौथी शताब्दी में प्रारम्भ हुआ था फिर बारहवीं शताब्दी में इसका पुनर्निर्माण हुआ और कुछ नये अंश जोड़े गये थे।

इसकी वेदी पर ग्रनर नरगा का राजमुकुट पहनाया गया है। भित्ति चित्र प्राचीन हैं। मन सत प्रम्प्राजिया के विविध चित्र हैं, जो नगर गतान्त के आसपास के हैं। इनमें उस काल के रहन-सहन, पोशाक और आचार विचार का सुस्पष्ट परिचय मिलता है।

ड्यूमा कैथड्रल की गणना ससार के सुविशाल गिरजों में है। जनश्रुति है कि इसके निर्माण में लगभग ५०० वर्ष लगे थे। विगत महायुद्ध की बमबारी ने इसे भी बहुत क्षतिग्रस्त किया था। गनीमत है कि यह सपूर्ण ध्वस्त होने से बच गया वरना आनेवाली पीढ़ियाँ नि सदेह विश्व की एक सर्वोत्कृष्ट कला कृति से वंचित रह जातीं। मैंने सुप्रसिद्ध चित्रकार ल्योनार्दो की श्रेष्ठतम कृति अन्तिम भोज (लास्ट सपर) यहाँ देखी। सचमुच ही चित्र अद्वितीय है।

चित्र में महात्मा ईसा अपने शिष्यों के साथ अतिम भोज पर बैठे हैं। उन्हें दूसरे ही दिन सूली दी जानेवाली थी। भोज में वह व्यक्ति भी शामिल है जिसने महात्मा ईसा के साथ विश्वासघात किया था। ल्योनार्दो की तूलिका ने प्रत्येक व्यक्ति के मनोभावों की बड़ी सूक्ष्म और सफल अभिव्यजना की है। महात्मा ईसा के चेहरे पर शान्ति दया क्षमा और सात्त्विकता के भाव स्पष्ट परिलक्षित होते हैं। भक्तों की आँखों में श्रद्धा भक्ति और विश्वास है।

ल्योनार्दो के सिवा विश्व के सभी बड़े बड़े चित्रकारों ने अतिम भोज का अकन किया है पर वह मूरत वह सीरत किसी से न बनी किसी से न उतरी। इस चित्र में महात्मा ईसा को अतिम उपदेश देते हुए देखकर लगा कि करुणा की मूर्ति स्वय साकार होकर हमारे सामने मौजूद है। बरबस हृदय में यह भावना उठी कि करुणा ही तो साक्षात ब्रह्म है।

गौतम और ईसा करुणा के साक्षात रूप बनकर ही तो मानव से महामानव ही नहीं भगवान के परम पद तक पहुँच सके। मैंने पेरिस के लूव्र में ल्योनार्दो का मोना लिसा भी देखा और यहाँ पर अतिम भोज भी देख लिया। न जाने क्यों कला पारखी 'मोना लिसा' को प्रथम और 'अतिम भोज' को द्वितीय स्थान देते हैं यह मेरी समझ में आज तक नहीं आया।

अन्य दर्शनीय स्थानों में स्काला थियेटर आर्क आफ पीस और रायल विला प्रमुख हैं। स्काला अपने परिमार्जित एवं कलापूर्ण सगीत नृत्य और नाटकों के कारण केवल इटली में ही नहीं सारे विश्व में अनुकरणीय माना जाता है। कई अजायबघर भी हैं जहाँ इतिहास, कला समाज शास्त्र और धार्मिक महत्त्व के अध्ययन की यथेष्ट सामग्री सगृहीत है।

इटली के अन्य शहरों और मिलान में एक उल्लेखनीय अंतर यह है कि यहां के स्थानीय लोग अधिक परिश्रमी और व्यवहार-कुशल हैं। दक्षिणी इटली में अपेक्षाकृत गरम जलवायु के कारण लोगों में परिश्रमशीलता कम देखने में आई। मिलान इटली का औद्योगिक और व्यापारिक केन्द्र भी है। शहर में मैंने शेयर बाजार भी देखा। व्यापारी बड़े जोरों में हाथ फटकारते हुए भाव ताव में व्यस्त थे। सोचने लगा कि अकेले कलकत्ता और बम्बई में ही यह रोग नहीं, यह तो सारे विश्व में व्याप्त है। एक भद्र-सज्जन मुस्कराकर अभिवादन करते हुए बोले, "क्या मैं आपकी कुछ सेवा कर सकता हूं?" मैंने बताया कि मैं यहाँ केवल देखने मात्र हूं, सौदा करने नहीं आया। वे हंसकर बोले, "सियार, मनुष्य और पैसे का सम्बन्ध सब देशों में एक-सा है, केवल नाम का भेद है।"

हम दोनों हंसने लगे।

वेनिस

वेनिस मिलान से करीब ७० मील पूर्व की ओर एड्रियाटिक सागर के उत्तरी छोर पर बसा है। वास्तव में यह शहर कई छोटे छोटे द्वीपों का पुंज है। वेनिस की सुन्दरता के बारे में बहुत दिनों से सुनता आ रहा था, आज प्रत्यक्ष देखकर लगा कि इसके लिए जो भी कहा गया है, उसमें कुछ भी अत्युक्ति नहीं।

इसकी स्थिति सामुद्रिक व्यापार के लिए अत्यधिक उपयुक्त है। आधुनिक युग में यूरोप के बाजार पर लन्दन का जो नियन्त्रण है, वह सौभाग्य प्राचीन काल में वेनिस को प्राप्त था। स्वेज मार्ग बनने पर इसका महत्त्व धीरे धीरे घटता गया। जो भी हो, यह अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण वाणिज्य व्यापार के क्षेत्र में प्रारंभ से ही अग्रणी रहा है। इन्हीं कारणों से यह निरन्तर समृद्ध होता गया। यहां के निवासी सुदूर अतीत से प्राच्य और प्रतीच्य के संपर्क में बराबर रहते आ रहे हैं, फलतः कला-कौशल पर भी इटली के अन्य भागों से भिन्न एक स्पष्ट छाप है। बेल-बूटे, कढ़ाई, सिलाई और कटाई-तराशी का इसका अपना निराला ढंग है जो सदा से आकर्षक रहा है। आज भी वेनिस की बनी कांच की वस्तुएँ अपनी नक्काशी और तराशी के कारण दुनिया में अद्वितीय हैं। सजावट के लिए यहां के झाड़-फानूस विश्व के सभी देशों में

बड़े रात्रिप्रिय हैं। यह सामान यहाँ आया जाया का राजो का साधन बन गया है।

वैसे इटली के सभी देशों में मोल भाव है पर वेनिस के बाजारों के क्रय विक्रय का दृश्य अनुपम है। वहाँ यों भी चीजें महगी हैं, फिर नगान चाजा का तो कहना ही क्या? यहाँ विदेशों से आने वाले यात्रियों का स्वागत करने की कमी नहीं है। मुझे भी एक ऐसा मौका पड़ा। चाय का एक सेट खरीदना चाहता था। मन मारकर के विश्व प्रसिद्ध बाजार में गया। एक दूकान पर पहुँचा। दाम अनाप शनाप। मुँह फेरकर लौटने लगा, तो लगभग सात चौथाई जहाँ दूकान के बाहर पर रखा कि दाम आधा। इस चमत्कार से पुराने समय की जयपुर की दूकानें याद आ गयी। मैंने जिस दूकान में सेट खरीदा उसने तो कई गुना दाम हाँक लिया था। मैंने भी सोच समझकर अपना दाम बताया। पर बाहर रखा पर सियोर कुछ दाल नहीं। मुझे कुछ आश्चर्य तो हुआ पर इससे अधिक आश्चर्य तब हुआ जब दूकान छोड़कर चार कदम आगे बढ़ गया। वे दूकान से उतर आये और अहसान जताकर कहने लगे आप विदेशी हैं वरना क्या वह आपने तो कौड़ियों का भाव भाव बताया है। फिर आसमान की ओर अपनी गोल मटोल आँखें नचाते हुए क्या कहूँ सिग्नोर वेनिस की चीज विदेशी न ले जाय यह मुझे गवारा नहीं धन्यवाद न जाइये।' आखिर इटालियन ११ ००० लीरा (भारतीय ३३० रुपये) देकर वह सेट खरीद ही लिया। आज भी जब विशिष्ट अतिथियों को उसमें चाय पान कराता हूँ तो वे उसकी नक्काशी और सुनहरे काम की सराहना किये बिना नहीं रहते।

वेनिस शहर की बनावट बिलकुल निराली है। छोटे-छोटे द्वीपों पर बसा होने के कारण आज भी यातायात का प्रमुख साधन नाव और मोटर बोट हैं। यद्यपि पुलों द्वारा द्वीप कहीं-कहीं पर जुड़े हुए हैं जिन पर मोटरें और बसें भी दौड़ती हैं फिर भी प्रधान मार्ग नहरों के ही हैं। वास्तुशिल्प की दृष्टि से इनमें अन्य शहरों से यहाँ विशेष अन्तर नहीं। एक बात अवश्य है कि यहाँ गिरजों के अलावा बहुत से ऐसे पुराने भव्य भवन भी हैं जिन्हें मध्ययुग में रईसों या सामन्तों ने बनवाया था पर आज वे मरम्मत के अभाव में जीर्ण शीर्ण पड़े हैं।

वेनिस में सिनेमा हैं थियेटर और म्यूजियम तथा ओपेरा भी। आवागमन के सभी प्राचीन और आधुनिक साधन उपलब्ध हैं। पर इतना सब होते हुए भी

वहा का विशेष आकर्षण है—गोंदोला। हसिना के समान सुंदर सजीला इन नौकाओं का वेनिस की नहरो के शान्त जल म मस्ती के साथ विचरते देखकर सम्मोहित हो जाना स्वाभाविक है। गोन्दोला में सजावट के साथ आराम का भी पूरा ध्यान रखा जाता है। इनम साफ और नरम बिस्तर शीशे जड़े शृंगार टेबिल आइने और कामदार परदे लगे हुए है। विश्राम के इन सारे साधनो का आकर्षण सजावट और सफाई के कारण और भी बढ़ जाता है।

बनारस के बजरे और कश्मीर के शिकारे गौन्दोला की टक्कर म नही ठहर पाते क्योकि वे बेचारे उस सुख और विलास के साधन नही जुटा पाते। यही कारण है कि आज मोटर बोटो के युग म भी गौन्दोला मस्ती और शान म झूमता है।

गौन्दोला स्वय म एक आकर्षण है पर गान्दोला के प्रति आकर्षण का कारण है उसका एकाकी मल्लाह उसका स्वस्थ सुगठित शरीर और मस्तीभरा प्रेम-सगीत। यही कारण है कि ससार के सुदूर अचलो म आकर विलासप्रिय स्त्रिया गौन्दोला म हफ्ता गुजार देती है और गौन्दोल उनके लिए शारीरिक सुखोपभोग के प्रतीक बन गये है।

नहर के किनारे बैठा इन्ही बातो पर विचार कर रहा था। रात ढलने लगी होटल की ओर चल पड़ा। कमरे म पहुचकर खिडकिया खोली। मन को थोडी शान्ति मिली। इसी उधेड-बुन म नीद आ गया।

प्रात विलम्ब से उठा। देखा वेनिस धूप म नहा रहा था। आज वेनिस से विदाई लेनी थी। सोचा कि यहा का विश्व विश्रुत समुद्र-तट लिडो अवश्य देख लेना चाहिए। ग्राण्ड कैनाल (बडी नहर) से होता हुआ समुद्र-तट पर पहुँचा।

समुद्र का नील जलराशि पर हल्की धूप लहरो के साथ नाच रही थी। समुद्र तट पर रेत की अच्छी खासी चौडी पट्टी है। रेत से हटकर किनारे-किनारे एक कतार म होटलो की ऊँची सफेद इमारतें अत्यधिक सुरुचिपूर्ण पृष्ठभूमि उपस्थित करता है। लोग धूप के चश्मे लगाये रेत पर रग बिरगी छतरियो के नीचे विश्राम कर रहे थे। अधिकाश नग्नप्राय थे। कुछ दूर हटकर बैठ गया। देखा, हजारो की सख्या म युवक युवतिया समुद्र में कल्लोल करने म मस्त हैं। निसकोच भाव से छेड-छाड, हँसी-मजाक चल रही है। न उन्हे आस-पास के लोगो का परवाह है न हमारे यहा की तरह आसपास के

लाग ही उन्हें फैशन का उत्सुक है या घूर रहे हैं। पास ही अधनंगे युवक युवतियाँ आलिंगन-पाश में आबद्ध हैं। उन्हें इस रूप में देखकर मुझे विशेष आश्चर्य नहीं हुआ, क्योंकि इससे भी कहीं अधिक पेरिस के नाइट-क्लबों में देख चुका था। सोचने लगा—क्या यूरोप इसी तरह अपनी भावी पीढ़ियों को निर्विकार होने की शिक्षा दे रहा है, अथवा भौतिकवाद की ओर आकृष्ट करता हुआ कह रहा है कि—

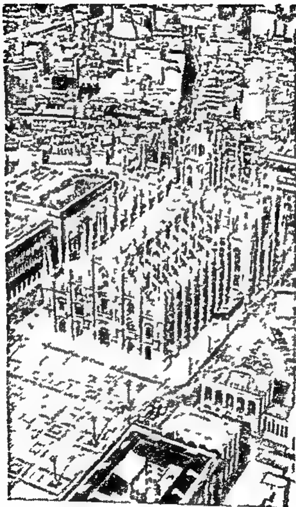
परिन्दे हश्र में पूछेंगे पाकबाजों से—

गुनाह क्या न किए क्या खुदा गफूर न था ?

मन में एक प्रश्न उठा क्या पाश्चात्य सभ्यता गिरजा और गोन्डोला के बीच अनिश्चित-सी नहीं भटक रही है ?

आज ही तो मुझे गिरजा की महानगरी रोम के लिए रवाना होना था।





मिलान का ड्यूमा कथेडल

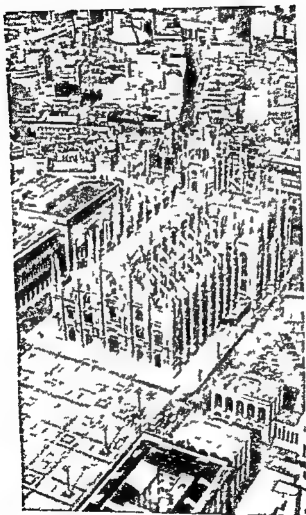
साथ ही उन्हें स्वमन को उन्मुक्त किया घूर रहे हैं। पास ही अधनंगे युवक युवतियाँ आलिंगन-पाश में आबद्ध हैं। उन्हें इस रूप में देखकर मुझे विशेष आश्चर्य नहीं हुआ, क्योंकि इससे भी बढ़ा अश्लील दृश्य मैं नाइट-क्लबों में देख चुका था। सोचने लगा—क्या यूरोप इसी तरह अपनी भावी पीढ़ियों को निर्विकार होने की शिक्षा दे रहा है अथवा भौतिकवाद की ओर आकृष्ट करता हुआ कह रहा है कि—

दरिन्दे हुए हम पुरानी पाकबाजी से—

गुनाह क्या न किए क्या शबाब मगरूर न था

मन में एक प्रश्न उठा — क्या पाश्चात्य सभ्यता शिक्षा और लोगों के साथ अनिश्चित-सी नहीं भटक रही है?

आज ही तो मुझे शिक्षा की महासागरी खोज के लिए रवाना होना था।



मिलान का डयूमा कैथेडल



मिलान में स्थित [illegible] नामक प्रमुख सड़क

पाम्पियाई की भस्म-समाधि पर

सुबह आठ बज चुके थे। बादलों के हल्के पुरते टुकड़े आसमान में धीरे धीरे तैर रहे थे। समुद्र की लहरियों में अठखेलियाँ करती हुई हवा पास से कुछ फुसफुसाकर चली आती थी। जाड़ा बीत चुका था फिर भी एक सिहरन-सी हो उठती थी।

हमारी बस नेपल्स से पाम्पियाई तक का रास्ता तय कर रही थी। बस काफी आरामदेह थी। सामने ड्राइवर की बगल में गाइड हाथ में एक छोटा सा माइक्रोफोन लिये बीच-बीच में हमें आसपास के स्थानों की विशेषताएँ बताता जा रहा था।

नेपल्स से पाम्पियाई का फासला केवल १८ मील है। बीच की साफ सड़क पर बस दौड़ रही थी। दोनों ओर के खेत अंगूर और दूसरी किस्म के फलों के बाग बड़े ही सुहावने लग रहे थे। बीच-बीच में किसानों के साफ सुथरे मकान वातावरण की शोभा और भी आकर्षक बना रहे थे। इन्हें देखकर मेरा ध्यान अनायास ही अपने देहातों के घरों की ओर चला गया। मुझे लगा कि विदेशी जब हमारे यहाँ देहात के घरों को देखते होंगे तो सोचते होंगे कि हम भारतीयों को रहने का ढंग नहीं आता। स्वच्छता और सौष्ठव के प्रति हमारा आकर्षण कम है। इटली की आर्थिक अवस्था अच्छी नहीं है। वहां के रहन-सहन का स्तर भी अन्य यूरोपीय देशों से गिरा हुआ है। फिर भी, यहां के किसानों के घरों में गरीबी भले ही दिखाई दे, पर उनमें फूहड़पन हरगिज नहीं।

दाहिनी ओर नजर उठाई। समुद्र गर्जन कर रहा था। कुछ दूर सामने देखा। विसुवियस खड़ा था। एकटक देखता रहा उस ज्वालामुखी को। हल्के बादलों की चादर में उसका सिर ढका हुआ था और शरीर कुहासे के झीने आवरण में। लगा कि वह प्रगाढ़ निद्रा में मग्न है।

गाइड की आवाज आई, ये काले काले पत्थर जो आप लोग देख रहे हैं विसुवियस के लावा से बने हैं। ... रोम रोम के इस सुन्दरतम नगर के साथ विसुवियस ने आग की फाग खेली थी और कुछ ही क्षण में वह भस्म-समाधि में लीन हो गया था।

सामने विसुवियस था। उसके पैरों पर पाम्पियाई। पाम्पियाई नगरी, उसके खण्डहर। राख की ढेरी॥

इस नगरी का भी एक अपना जमाना था। कितनी ही शताब्दियों की सजी हुई अपनी संस्कृति और सभ्यता की गरिमा में गर्वोन्नत पाम्पियाई सुन्दरता में अद्वितीय थी। नगरवासी ऐश्वर्य-सम्पन्न थे। इसकी रीति-नीति और संस्कार के अनुकरण देश देशान्तर में होते थे। किन्तु कराल काल की गति इतनी न्यारी है। उसके एक ही भ्रू-कुंचन पर विसुवियस ने हुंकार भरी और सदियों की सभ्यता और संस्कृति राख की ढेरी के नीचे दब गई। जिन्दगी की मुस्कान पर मृत्यु की यवनिका गिर पड़ी। मिट गया पाम्पियाई का अस्तित्व। अब रहे हैं ये खण्डहर ।

एक झटका लगा। हमारी बस रुक गयी थी। सभी यात्री बस से उतर पड़े। पाम्पियाई में प्रवेश किया। गाइड परिचय देने लगा—"इस जनपद की उत्पत्ति के बारे में विद्वान आज भी एकमत नहीं हो पाये हैं कि यह सर्वप्रथम कब बसा था, किन्तु इतना सभी मानते हैं कि ईसा मसीह के जन्म से कई सौ वर्ष पूर्व इस नगरी का यश और ऐश्वर्य विश्व विश्रुत हो चुका था।' उसने मुस्कराकर कहा— महाशया, किसी सुन्दरी के लिए तलवारों का खटकना कोई आश्चर्य नहीं। कई साम्राज्यों ने पाम्पियाई को अपनाने के लिए आपस में अपनी अपनी शक्ति आजमायी। खून की नदियाँ बह गयीं। अन्त में ईसवी पूर्व प्रथम शताब्दी में इस पर रोम का अधिकार हुआ। इसके बाद से इस जनपद के ऐश्वर्य का स्वस्थ विकास निरन्तर होता ही गया। रोम के धनिक सामन्त व्यापारी तथा नागरिकों के आवास यहाँ तभी से बनने शुरू हुए। समुद्र के सान्निध्य ने इसे वाणिज्य में प्रतिष्ठा दी और कृषि ने इसे उन्नतिशील बनाया। क्रमशः इसकी जनसंख्या बढ़ती गई।

पाम्पियाई का इतिहास बताता है कि सन ६३ ई० में एक भीषण भू-कम्प ने नगरी को बुरी तरह झकझोरा था। काफी नुकसान पहुँचाया। वर्षों तक पुनर्निर्माण का कार्य नागरिकों ने साहस और उत्साह के साथ चलाया। किन्तु उसे कहाँ पूरा पड़ना था?

सन ७९ ई० की बात है। रात हो चुकी थी। दिन भर के परिश्रम के बाद लोग घरों में निश्चिन्त थे। कुछ आमोद प्रमोद में व्यस्त थे। विसुवियस अपने चरणों के पास बैठी सुन्दरी पाम्पियाई पर एक विकट अट्टहास कर उठा। फूट निकले धुएँ के बादल राख के गुबार और दहकते शोलों के फौव्वारे जलते हुए

लावा की सहस्र धाराएं फूट पड़ी। काल की इन लपलपाती जीभों के बीच पाम्पियाई घिर गयी। लोगों को भागने का मौका तक नहीं मिला। जहरीले धुएं और राख की आंधी तथा अंगारों की वर्षा। जो जहां था, वहीं रह गया। समुद्र के रास्ते भी बच निकलना असम्भव था। समुद्र में भी लावा अनेक धाराओं में बह रहा था। मीलों तक समुद्र का पानी खौल उठा। ध्वंस इतना व्यापक हुआ कि फिर इसे सिर उठाने का मौका नहीं मिला। पुनर्निर्माण असम्भव था। करता कौन? किसमें साहस था कि विसुवियस के पराक्रम को चुनौती दे?

प्रलय-ताण्डव शान्त होने पर, बचकर भागे हुए कुछ लोगों में जो बच गये वे अपनी-अपनी धन-सम्पत्ति के उद्धार के लिए लौटे किन्तु सफल न हो सके। अब तो सब कुछ राख पत्थर और लावा के नीचे दबा पड़ा था। लावा जमकर चट्टान-सा बन गया था। कहीं कहीं तो ३० फुट मोटी परत जम गयी थी। खोदकर कुछ निकालना व्यर्थ था। प्रकृति के सामने मनुष्य को पराजय स्वीकार करनी पड़ी।

मध्ययुग में पाम्पियाई की ओर किसी का विशेष ध्यान नहीं गया। इसकी कहानी विस्मृति के गर्भ में पड़ी रही। १६वीं शताब्दी के अन्तिम चरण में लोगों का ध्यान इसकी तरफ गया। उद्धार का कार्य प्रारम्भ किया गया पर प्रगति बहुत ही सुस्त और सीमित रही। १९वीं शताब्दी के प्रारंभ में फ्रांसीसी सरकार ने यह दुरूह कार्य अपने हाथों में लिया और तब से लगातार इस दिशा में प्रगति होती रही। धीरे धीरे इटली सरकार का भी ध्यान पाम्पियाई की ओर गया और उसने १८६१ में खुदाई का काम अपने हाथ में ले लिया।

'गाइड' के साथ घूमता हुआ सब कुछ देख रहा था। दो हजार वर्ष पूर्व यह बड़ा जनपद था। इसकी निर्माण-व्यवस्था, कानून-कायदे और यहां के रहन-सहन के ढंग को देखकर ऐसा अनुमान होता है कि आधुनिक तरह के शहरों का सूत्र यहां भी हमारे यहां के मोहन-जोदड़ो और हड़प्पा की तरह ही रहा होगा। नगरी के चारों ओर दीवार थी। उन दिनों स्वरक्षा के लिए ऐसी व्यवस्था का रहना आवश्यक था। रास्ते अच्छे बने थे। १२-१४ फुट से अधिक चौड़े तो नहीं थे मगर विशेषता यह थी कि इन पर फुटपाथ बने थे। सड़कें नगरी की महत्वपूर्ण रचना में अपेक्षाकृत प्रशस्त बनायी गयी थीं तथा इन पर चौड़ी चौड़ी पटरियां भी थीं। ये पटरियां अथवा फुटपाथ प्रायः सभी सड़कों पर ऊंचे रखे गये थे। इससे गाड़ियों के आने-जाने में दिक्कत होने की सम्भावना नहीं थी। मकान और रास्ते नगरी को जन निस्तारण-सुविधा का लक्ष्य रखते हुए बनाये गये थे। कई

स्नानागारों के ध्वंसावशेष स्पष्ट बताते हैं कि उस समय गर्म और ठंडे पानी का प्रबन्ध था।

एक स्थान बहुत बुद्ध और जैसा लगा। अनुमानतः यहाँ पाम्पियाई का व्यवसाय-केन्द्र रहा होगा क्योंकि इसी के आगे और गली का विस्तार है। मध्य-स्थान में बाजार हाट और न्यायालय भी था। इससे स्पष्ट पता चलता है कि पाम्पियाई का वाणिज्य-व्यापार कितना उन्नतिशील रहा होगा। नागरिकों के मनोरंजन की भी व्यवस्था थी। नाट्यशालाओं के खण्डहरों को देखकर मालूम होता है। उनमें 1000 तक व्यक्तियों के बैठने की गुंजाइश थी। इन नाट्यशालाओं पर यूनानी वास्तु-शैली का प्रभाव था।

इटली की सरकार ने पाम्पियाई में एक म्यूजियम बना दिया है। म्यूजियम दर्शनीय स्थल है। यहाँ सुरक्षित वस्तुओं से पाम्पियाई की सभ्यता स्पष्ट हो जाता है। दैनिक व्यवहार में आने वाली विभिन्न वस्तुओं को देखकर नागरिकों के जीवन-स्तर का सहज अनुमान हो जाता है। कलाविलास के और गले के हार अंगूठियाँ तथा इसी तरह के नाना प्रकार के वस्त्राभूषण स्त्रियों के शृंगार और रुचि का परिचय देते हैं। तरह-तरह के बरतनों के साथ मुरादान भी हैं जो बताते हैं कि जीवन में विलास का प्रवेश हो चुका था। विभिन्न प्रकार की प्रतिमाएँ भी यहाँ देखने में आयीं। ये सभी अधिकतर संगमरमर और कांसे (ब्राज) की बनी थीं। यहाँ रखे छुरी-काँटे तराजू और अन्यान्य वस्तुओं से उनके सामाजिक जीवन का भी परिचय मिला।

म्यूजियम के एक भाग में प्लास्टर किये गये शरीर देखने में आये। एक स्त्री का शरीर देखा। एक हाथ की कोहनी में अपना मुँह छिपाये है और दूसरे हाथ की मुट्ठी उसकी घबराहट बताती है। ज्वालामुखी से निकलने विषैले धुएँ से बचाने का दम घुट गया होगा। एक कुत्ते का शरीर देखा। विषाक्त प्रतिक्रिया से उसका शरीर बिलकुल धनुष की तरह ऐंठ गया था।

म्यूजियम में जो भी संग्रह है वह वास्तव में उद्धार में प्राप्त वस्तुओं का एक सामान्य अंशमात्र है। बहुत-सी वस्तुएँ यूरोप के अन्य देशों में ले जायी गयी हैं जिनमें सबसे अधिक भाग के नूव म्यूजियम में संगृहीत है। अमरीका के पूर्वोक्त संग्रहालय में भी पाम्पियाई के कुछ ध्वंसावशेष ले जाये गये हैं।

ज्वालामुखी विसुवियस पर चढ़ने के लिए एक सड़क बना दी गयी है। मोटर इसी रास्ते पर विसुवियस के मुख से कुछ सौ फुट दूर तक यात्रियों को ले

जाता है। पैदल तो बाद में भी मुड़ कर पहुँच जाय। पर शामत किसे आयी है और आफ़त मोल लेना किसे पसन्द होगा ?

यात्रियों की सुविधा के लिए यहां एक पोस्ट आफ़िस है। एक अच्छा सा रेस्तरां भी है और छोटी छोटी दुकानें भी हैं। इन दुकानों में इटली के विभिन्न भागों में बनी शौक की चीजें मिलती हैं।

शाम हो चुकी थी। घूमते घूमते काफ़ी थक गया था। बस लौटने में अभी देर थी। मैं रेस्तरां में बैठकर कॉफ़ी पीने लगा। खिड़की के बाहर विसुवियस दिखाई पड़ रहा था। वह अब भी हल्का धुआं उगल रहा था। मैं सोचने लगा कि इसका धुआं बताता है कि यह तो न सुप्त है और न शान्त हुआ। पर अब यह किस पाम्पियाई को भस्म करने के लिए भीतर ही भीतर खौल रहा है ? कॉफ़ी के धुएं ने मेरी दृष्टि को धुंधला कर दिया और जैसे कान में कोई कह गया—'यह नफ़रत भरी निगाह मुझ पर है या प्रकृति पर ? खुद पर क्यों नहीं ? हिरोशिमा और नागासाकी को किसने भस्म किया—मैंने, फ्यूजियामा* ने या तुमने ?'

मैं चौंक उठा। देखा गरम कॉफ़ी के धुएं ने चश्मा धुंधला कर दिया है। उतारकर चश्मे को साफ़ किया और जल्दी-जल्दी कॉफ़ी पीने की कोशिश करने लगा।

---

* फ्यूजियामा—जापान का एक ज्वालामुखी।

रोम—यूरोप की प्राचीन पुरी में

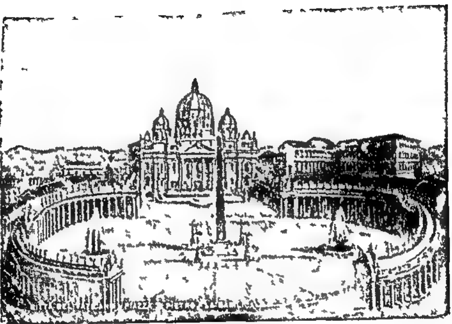
बर्लिन से रोम के लिए ट्रेन में बैठा। उत्तरी इटली की यात्रा मिलान और वेनिस देखकर समाप्त कर चुका था। अब रोम एवं नेपल्स तक का ही भाग था, यात्रा पूरी करना चाहता था। सुन्दरता की गलियाँ, पहाड़ और किनारों को देखने की मन में ही रह गई। समय बहुत ही कम था।

रोम पहुँचने की खुशी में सारे रास्ते पुलकित हो रहा था। ट्रेन अपनी रफ्तार से भाग रही थी। स्वीडन और स्विट्जरलैण्ड की ट्रेनों में बहुत घूम चुका था, इसलिए इटली की ट्रेन यात्रा उतनी अच्छी नहीं लगी।

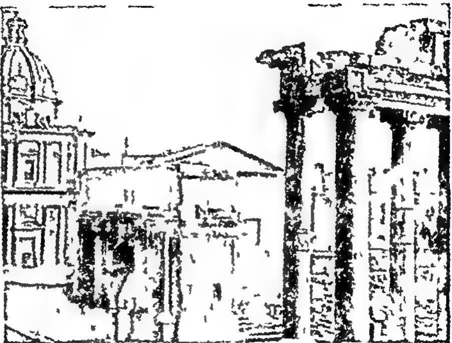
बचपन से सुना करता था— 'रोम एक दिन में नहीं बना।' 'दुनिया की सारी सड़कें रोम पहुँचाती हैं' इत्यादि। आज और भविष्य उन्हीं पर विचार कर रहा था। निःसन्देह रोम का निर्माण एक दिन में नहीं हुआ होगा। सदियाँ लगी होंगी। नई-नई विचार धाराओं ने उसे प्रभावित किया होगा। धर्म और संस्कृति का केन्द्र रहा है रोम और आज भी है। ईसाई धर्म के कैथोलिक मत का तो यह तीर्थ है। सारा पाश्चात्य जगत् ही ईसाई है। इसीलिए श्रद्धा भक्ति और प्रेम ने उन्हें रोम की ओर आकृष्ट किया। बाधाएँ और विपत्तियाँ पार कर इस तीर्थस्थली के दर्शन मात्र से अपनी आँखों को तृप्त कर अपने को और अपने जीवन को वे आज भी धन्य मानते हैं। सोचने लगा वैभवशाली इतिहास के रोम का रूप आज जाने कैसा होगा। शायद हमारी दिल्ली की तरह या काशी की तरह मकानों की बनावट में भिन्नता भले ही हो वातावरण एक सा ही रहेगा।

रोम पहुँचा। बिलकुल आधुनिक वातावरण। स्टेशन पर अन्य यूरोपीय देशों की अपेक्षा कुछ शोरगुल अधिक था। बहुत कुछ हमारे देश का सा। सामान उठाकर होटल की ओर जाते हुए सोचने लगा कि संसार के प्राचीनतम समझे जाने वाले इस नगर में तो लन्दन, पेरिस, स्टाकहोम, ब्रुसेल्स नजर आते हैं पर प्राचीन रोम की झाँकी नहीं मिलती। न पोशाक में और न लोगों के ढंग में। मेरा आकर्षण आधुनिक रोम से अधिक प्राचीन रोम की ओर था। अतः मैंने पहले इसे ही देख लेना निश्चित किया।

रोम की प्रथम बस्ती ईसा पूर्व आठवीं सदी में बसी थी। आज तक यह



सेंट पीटर्स का विश्वविख्यात गिरजा और प्रांगण



एक प्राचीन रोमन मन्दिर का सुन्दर अवशेष

स्थिर नहीं हो पाया है कि इस अमरपुरी के आदिवासी कौन थे और कहां से आकर बसे थे। बहुत लोगों की धारणा है कि ट्राय के युद्ध में बचकर भागे हुए कुछ लोग एशिया माइनर से आकर पहले-पहल यहाँ बस गये थे।

रोम के खण्डहरों को देखकर ध्यान बरबस सुदूर अतीत की ओर चला जाता है। राजवंश एवं जनतन्त्र के उत्थान पतन, रोमन प्रभुत्व का उदय और अस्त मानो सभी एक साथ मस्तिष्क में घूम जाते हैं। रोम में इतने ऐतिहासिक खण्डहर और भवन हैं कि प्रत्येक का वर्णन सम्भव नहीं। यहां सदियों तक आक्रमणकारियों के प्रहार होते रहे। नये-नये प्रासाद बने, पिछले कुछ तोड़ गये, कुछ स्वयं ही देख रेख के अभाव में क्षीण हो गये।

इन्हीं खण्डहरों में रोम के प्रसिद्ध कोलोसियम (एम्फी थियेटर) को देखा। चार तल्ले के इस विशाल वृत्ताकार भवन के चारों ओर दर्शकों के बैठने का स्थान है। एक ओर वह स्थान भी है जहाँ सम्राट स्वयं बैठकर 'प्रदर्शन' देखते थे। सामन्त अपने पदानुसार बैठते थे। ठीक मध्य भाग में एक वृत्ताकार बड़ा सा आँगन है। यहां वे प्रदर्शन हुआ करते थे। प्रदर्शन क्या थे नृशंसता का नग्नतम रूप था। हमारे देश में तो शायद ही इस प्रकार के दृश्यों का विवरण मिले। एम्फीथियेटर के विस्तृत आंगन में मनुष्य और पशु में द्वन्द्व कराये जाते थे—कभी जंगली सूअर तो कभी भूखे सिंह के सामने मनुष्य छोड़ दिया जाता था। दृश्य कितना वीभत्स हो उठता होगा! याद आया कि यहां तो क्रूर सम्राट् नीरो ने ईसाइयों को एक जगह इकट्ठा कर उन पर भूखे सिंह छोड़ दिये थे। रोमांच हो आया। आश्चर्य हुआ कि क्या यही जूलियस सीजर के सुसभ्य रोम की संस्कृति और सभ्यता थी? क्या इसी रोमन संस्कृति और सभ्यता ने पश्चिम को कानून का बोध कराया था? क्या यह वही रोमन संस्कृति थी जो आज भी यूरोप ही नहीं बल्कि समग्र पाश्चात्य सभ्यता की आधार शिला है? किस प्रकार एम्फी थियेटर में बैठ पचास हजार दर्शक मनुष्य के चिथड़े उड़ते बर्दाश्त करते थे? परन्तु मनुष्य भी तो मूलतः पशु ही है—पश्चिम के महान जीवशास्त्री डारविन के मतानुसार।

रोम के खण्डहर और प्राचीन भवनों को देखकर विगत शताब्दियों के इतिहास की परतें एक-एक कर खोलने में कठिनाई नहीं होती, क्योंकि उनमें अपने अपने समय की छाप अंकित मिलती है। लोगों के रहन-सहन और रुचि का परिचय मिल जाता है। यह निःसंदेह इटली और विशेषतः रोमन सभ्यता के लिए सौभाग्य की बात है कि विदेशियों के आक्रमण तो उन पर हुए पर वहाँ के सांस्कृतिक चिह्नों को हमारे देश की तरह मटियामेट नहीं किया गया। यही नहीं,

राम का यह भी सौभाग्य रहा है कि प्राचीन भवनों और जीर्णप्राय ऐतिहासिक स्थलों का पुनर्निर्माण भी समय-समय पर होता रहा है। इस दिशा में वहां के पोप (धर्म गुरु) विशेष रूप से उल्लेखनीय और श्रद्धा पात्र हैं। १५वीं शताब्दि से तो निरंतर समय-समय पर पोपों की चेष्टा यही रही है कि रोम का गौरव बना और सांस्कृतिक केन्द्र कहलाने का उसका अधिकार अक्षुण्ण रहे।

यही कारण है कि आज भी रोम में ऐतिहासिक शृंखला की कड़ियाँ अक्षुण्ण हैं। नेपोलियन के साथ युद्ध के बाद इटली में प्रादेशिकता की भावना धीरे धीरे घटने लगी और एकता की भावना बनने लगी। रोम का महत्व बढ़ा और एक बार फिर रोम यूरोप की संस्कृति का नियंत्रण करने लगा। बाद में भी सम्राट विक्टर इमेनुएल ने इस सजाने संवारने में कसर न रखी। यूरोप और सुदूर अमरीका के लोग यहां के जीवन का आनन्द लेने के लिए आने लगे। आज का रोम अपने उस गौरव का अभी तक अपने उत्तराधिकारी के रूप में सुरक्षित रख रहा है।

पियाजा द स्पाना के मुहल्ले में टहलते हुए मैंने ग्रीक, अमरिकन, फ्रेंच, जर्मन, रूसी आदि विभिन्न देशों के लोग देखे। विगत महायुद्ध के पहिले इटली के तानाशाह बनिटो मुसोलिनी ने भी इसको खूब सँवारा था। चौड़े रास्ते, बाग बगीचे, नये ढंग के बन्द-खंड भवन और बिजली की सुविधा के कारण रोम यूरोप के अच्छे में अच्छे शहर का टक्कर का बन गया। आज रोम की आबादी बीस लाख से भी ऊपर है जब कि इसी शताब्दि के प्रारम्भ में यह सिर्फ चार लाख था। शहर की सबसे बड़ी समस्या है यातायात की भीड़ ठीक वही जो हमारे यहाँ बम्बई, कलकत्ता और दिल्ली की है।

सन्ध्या का समय था। मैं काफे ग्रेको में बैठा कॉफी पी रहा था। काफे ग्रेको रोम का एक प्रसिद्ध काफे है जहाँ लेखक, कलाकार, पत्रकार और कवि एकत्र हो जाते हैं। मेरे पास की टेबिल पर एक स्पेनियर्ड, एक अंगरेज और एक अमरिकन बैठे हुए थे। वे आपस में बातें कर रहे थे। स्पेनियर्ड भी मात्र अंगरेजी बोल रहा था। कभी-कभी तीनों हो मेरी ओर देख लेते थे। मेरी दृष्टि स्पेनियर्ड से मिली तो उसने मुस्कराकर अभिवादन किया और तुरंत अंगरेजी में पूछा—अंगरेजी, फ्रेंच, स्पेनियर्ड कौन-सी भाषा में बात करने पर आपको सुविधा होगी? शायद आप भारतीय हैं?

मैंने अंगरेजी में कहा—आपका अनुमान सही है। मैं भारतीय हूँ। हम चारों एक ही टेबिल पर बैठ गये। अब मैं वक्ता बना और शेष तीनों श्रोता। उन्होंने भारत और भारतीय संस्कृति पर प्रश्नों की झड़ी लगा दी। मैंने यथासाध्य उनका समाधान करने की चेष्टा की। मैं व्यवसायी हूँ—राजनीति, साहित्य और इतिहास का मेरा

प्रध्ययन माधारण मा है। अलबत्ता अपन यहा मामाजिक कार्यों मे भाग लना हूँ।

जिम प्रकार काशी का भ्रमण सारनाथ के बिना और मथुरा का वृन्दावन क बिना पूरा नहा हाना उमी प्रकार राम जाकर वटिकन न दखना राम न देखन क बराबर ही है। राम का मन्त्व कवन एनिहामिक ही नहा वन्कि उमक माथ ईमाई धम का गौरव भी जुडा हुआ है और उमका केन्द्र-स्थल है—वेटिकन पाप का प्रामाद।

वटिकन राम क अन्तगत एक छोटा मा राज्य है। इमका अपनी मरकार और अपन डाक तार पुलिस और रडियो स्टशन है। इम राज्य का मर्वोच्च शामक है धम गुरु पोप। पोप का अधिकार उमकी श्रद्धा का माम्राज्य इतना विस्तृत और असीम है कि वहा सूर्यास्त हाना ही नहा। पाप अपन छोट स राज्य क बाहर कभी नहा आने-जाने। इनिहाम म पहली बार वतमान पाप अभी, इमा वष ईसा के जन्म-स्थान यरुमलम की पुण्य-नगरी म गय थे। इमसे पहल कभी कोई पाप अपने 'राज्य म बाहर नही गया था। उनका मारा ममय धम चिन्तन और अध्ययन म ही व्यतीत होता है। विश्व म उनका प्रभाव एव आदर कम नहा है। ईमाई चाहे कैथोलिक हो या प्राटेस्टेण्ट, पाप को मभी ही आदर की दृष्टि से देखते है।

ममार क मभी दशा क कथालिक इसाइ पाप क वाक्य का वेद वाक्य मानते है और मभी राष्ट्र वटिकन राज्य की सुरक्षा का ध्यान रखते है। विगत महायुद्ध क दौरान राम पर सकडा बार बमबारी हुई किन्तु बमवषका न मदैव इम बात का ध्यान रखा कि वटिकन क्षतिग्रस्त न हो जाय।

वटिकन का निर्माण वास्तव म पाचवी शताब्दि क प्रारभ म हुआ था। विगत पन्द्रह शताब्दियो म ममार क कोने-कोने म श्रद्धालुओ ने श्रेष्ठतम वस्तुएँ यहाँ भेंट म लाकर अपन का धन्य माना। लोगो न अपन जीवन भर की कमाई पाप क चरणो म अर्पित कर दी। यही कारण है कि आज यहा जितनी बहुमूल्य मामग्री सुरक्षित रूप म सग्रहीत है वैसी न तो ब्रिटिश म्युजियम म है और न वाशिगटन या मूज म ही। विश्व की दुलभ वस्तुए पुस्तक और चित्र यहा देखन को मिलते है। विश्व क श्रेष्ठतम कलाकारो न वटिकन गिरजो और मठो को मजान म अपनी प्रतिभा का कृताथ माना और इमी म सारा जीवन खपा दिया।

इतना वैभव आदर और असीम अधिकार किमी भी व्यक्ति का चित्त डावाँ डोल कर सकते थ। किन्तु वतमान पाप को दखकर मानना पडता है कि सात्विकता

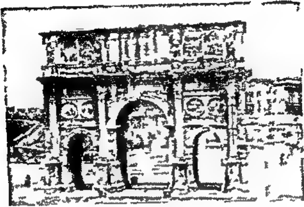
के आगे मानसिक विकार ठहर नहीं पाते। पिछली दो-तीन सदियों से तो पोप के चुनाव में अत्यन्त सतर्कता और सावधानी बरती जाती है भले ही प्राचीन काल में कुछ पोपों का चरित्र सन्दिग्ध रहा हो।

वटिकन को अच्छी तरह से देखने के लिए काफी समय चाहिए। मैंने तो सरसरी निगाह से दीवारों पर अंकित चित्र देखे। ज्यादातर मुस्लिम जिहाद के चित्र थे। इसके अलावा ईसाई धर्म से सम्बन्धित अन्य सुन्दर एवं चित्ताकर्षक चित्र भी थे। ये विश्व के सर्वश्रेष्ठ प्रतिभाशाली कलाकारों द्वारा बनाये गये हैं। कुछ तो इतने बहुमूल्य हैं कि प्रत्येक का मूल्य पचास लाख रुपये तक कूता गया है। यदि सब मिलाकर पोप के संग्रहालय का मूल्य कूता जाय तो अरबों तक पहुँचेगा। मैंने यहाँ पर सिस्टाइन के गिरजे में विश्व के दो प्रसिद्ध कलाकार माइकल एंजिलो और रैफियल के 'माता और शिशु' एवं 'बालक यीशु' नाम के सर्वोत्तम चित्र देखे।

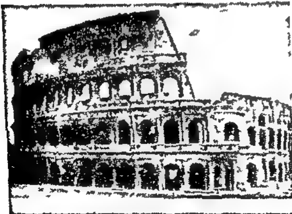
वटिकन में बहुत से गिरजे और मठ हैं। मठों में ईसाई-साधु रहते हैं। यहाँ किशोर साधुओं को भी देखा जिन्हें ईसाई धर्म तथा धार्मिक आचार-व्यवहार में पारंगत बना कर पूर्ण रूप से योग्य साधु बना दिया जाता है। इटली की पर्वत्रेणियों में साधुओं के कुछ ऐसे सम्प्रदाय भी हैं जो अपने मठों में ही तपस्या करते-करते सारा जीवन व्यतीत कर देते हैं और कभी वहाँ से नीचे नहीं उतरते।

वटिकन में ही विश्व प्रसिद्ध सन्त पीटर्स का गिरजा है। यह महात्मा ईसा के मुख्य शिष्य सन्त पीटर के स्मारक स्वरूप बनाया गया है। ईसाई मत वास्तव में सन्त पीटर का बड़ा ऋणी है। फिलस्तीन के मरुस्थल में महात्मा ईसा ने करुणा और क्षमा का मंत्र बर्बर लोगों को सुनाया पर वे सूली पर चढ़ा दिये गये। उनकी मृत्यु के उपरान्त सन्त पीटर उनका सन्देश पश्चिम की ओर पहुँचाते हुए रोम पहुँचे। रोमन शासकों के अत्याचार से पीड़ित जनता में इनके प्रेम और शान्ति के सन्देश से आशा, धैर्य और जीवन के प्रति विश्वास का संचार हुआ।

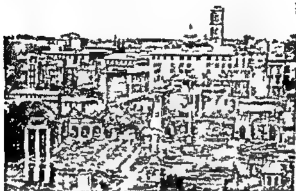
ईसा को मानने वालों की संख्या बढ़ने लगी। ईसा के जन्म को ६० वर्ष हो चुके थे। रोमन साम्राज्य का गौरव मध्याह्न पर था। नीरो जैसा विवेकहीन सम्राट गद्दी पर था। उसने ईसाइयों को हजारों की संख्या में या तो पहाड़ों की घाटी से गिरवा दिया या आग में भुनवा दिया। सन्त पीटर भी जीते-जी जला दिये गये। ईसाइयों पर भूखे सिंह छोड़ गये। सब कुछ हुआ पर आसुरी शक्ति पर अन्त में देवत्व ने विजय पायी। नीरो पापों से हारकर मर गया। ईसाई धर्म



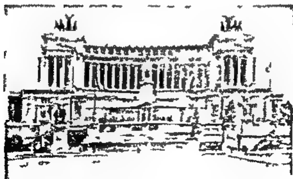
रोम में कोन्सटिनों का बुर्ज



कालोसिअम, रोम



नया और पुराना रोम



रोमना में और फिर रोमना के माध्यम से उनके साम्राज्य के कोने-कोने में फैला। थोड़े ही दिनों में समस्त यूरोप तथा उत्तरी अफ्रीका ईसा की वाणी में दीक्षित हो गये। यूरोप के प्रभुत्व के साथ साथ विश्व के कोने-कोने में ईसाई धर्म का प्रसार हो गया।

सन्ट पीटर का गिरजा विश्व की सबसे बड़ी इमारत तो है ही साथ ही कलापूर्ण भी कम नहीं है। इसकी ऊंचाई के सामने दिल्ली की जामामस्जिद छोटी सी है। इसकी वास्तुकला तो आश्चर्यचकित कर ही देती है किन्तु निर्माण कौशल भी कम विस्मय में नहीं डालता। इसके अन्दर ६० हजार व्यक्ति बड़ी आसानी से प्रार्थना कर सकते हैं। अन्दर चारों ओर दीवारों और मेहराबों पर धार्मिक चित्र बने हैं। इस गिरजे में अनगिनत स्मारक और समाधियां हैं। सबसे महत्त्वपूर्ण सन्त पीटर की कांस्य की विशाल मूर्ति है। सन्त पीटर एक कुर्सी पर बैठे हैं। शरीर वस्त्र से ढका हुआ है। एक हाथ में कुंजियां हैं और एक हाथ की तर्जनी और मध्यमा मुद्रा विशेष द्वारा किसी भाव की अभिव्यंजना कर रही हैं। चेहरे पर घनी दाढ़ी है। सर के घुंघराले केशों के पीछे चक्राकार चक्र सा है जो सहज ही श्रद्धा और आदर की भावना जगाता है। सन्त पीटर का एक पैर वस्त्र में ढका हुआ है। और दूसरा बाहर की ओर बढ़ा सा है। भक्तों के स्पर्श से चरण का यह भाग घिस गया है।

दिन भर घूमते रहने के कारण काफी थक गया था। अतः जल्दी ही अपने होटल लौट आया और विश्राम करने लगा। खिड़की से टाइबर नदी दिखाई दे रही थी। उसी का एकटक देखने लगा। बड़ी शान्ति मिली। मन में सोचा एक साम्राज्य फैलाया था सिकन्दर ने, ढह गया। रोमन भी तलवार की नोक पर साम्राज्य पर साम्राज्य स्थापित करते गये, पर वे भी टिक न सके। आश्चर्य है कि सिद्धार्थ गौतम और ईसा का साम्राज्य काल के गाल में क्यों नहीं समाया।

टाइबर से आती हुई हवा के एक झोंके ने फुसफुसाकर कान में कहा 'तलवार की नोक शरीर ही छेद सकती है पर क्षमा और प्रेम तो हृदय में घर बना लेते हैं।' तुरन्त ही ध्यान आया स्टैलिन, मुसोलिनी, हिटलर और उनकी तुलना में हमारे अपने बापू का।

निशा सूर्य के देश में

बहुत दिनों से सुन रखा था कि हमारी धरती पर उत्तरी ध्रुव और दक्षिणी ध्रुव नामक ऐसे स्थान भी हैं जहाँ ६ महीने का दिन और ६ महीने की रात होती है। पिछली बार स्वीडन गया तो सोचा कि उत्तर के ध्रुवाचलीय प्रदेशों के इतने निकट पहुँच ही गया हूँ क्यों न इस अवसर का लाभ उठाकर निशा-सूर्य का भी दर्शन कर लूँ। इसी इरादे से नक्शे पर निगाह फेरी तो देखा कि उत्तरी ध्रुव को आइसलैण्ड, स्कैण्डिनेविया (नारवे और स्वीडन), फिनलैण्ड, साइबेरिया तथा अलास्का वृत्ताकार घेरे हुए हैं। स्कैण्डिनेविया यूरोप के उत्तर में एक प्रायद्वीप है जिसका आकार मुँह खोले हुए शेर की तरह है। उसमें दो राज्य या देश हैं। उत्तर पश्चिम में नार्वे है और दक्षिण-पूर्व में स्वीडन।

स्कैण्डिनेविया जाने का कार्यक्रम मेरे यूरोप पर्यटन में था। अतः मैंने इसे प्राथमिकता दी। तय किया कि पहले स्वीडन की राजधानी स्टॉकहोम पहुँचा जाय फिर वहाँ उत्तर की ओर ध्रुवाचलीय प्रदेश लैपलैण्ड में होते हुए नारविक के रास्ते नारवे में प्रवेश कर उसकी राजधानी ओसलो लौटा जाय क्योंकि इस प्रकार स्वीडन और नारवे दोनों को उत्तर से दक्षिण तक देख लूँगा और निशा सूर्य का दर्शन भी कर सकूँगा।

स्टॉकहोम पहुँचा। यह स्वीडन की राजधानी है। इसमें चारों ओर छोटी छोटी पहाड़ियों के साथ साथ झीलों के किनारे इस प्रकार गुँथी हुई हैं कि सारा वातावरण अत्यन्त सुरुचिपूर्ण और नयनाभिराम हो उठा। शहर के चारों ओर घने वन हैं इतने निकट कि शहर के मध्य भाग से २०-२५ मिनट में ही वनों में पहुँचा जा सकता है।

स्टॉकहोम की स्थिति सामरिक दृष्टि से भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। सच पूछा जाय तो इसकी स्थापना ही बाल्टिक सागर के रास्ते स्वीडन पर होनेवाले आक्रमणों के विरुद्ध एक गढ़ के रूप में हुई थी। बाल्टिक सागर से आनेवाले शत्रुओं की सेनाएँ मालार झील के रास्ते स्वीडन में काफी अन्दर तक पहुँच जाती थीं। उनको मालार झील के मुहाने पर ही रोकने के लिए उसके मुहाने पर स्थित कई टापुओं पर मोर्चाबन्दी की गयी थी और केन्द्रीय स्थिति वाले द्वीप पर ग्यारहवीं शताब्दी में

एक विशाल दुर्ग बनाया गया था। कालान्तर में उस दुर्ग के आसपास बस्तियाँ बसती गईं। उनका विकसित रूप ही आधुनिक स्टॉकहोम है।

नगर के उत्तरी भाग में वाणिज्य-व्यवसाय का केन्द्र है, जिसमें आधुनिक किस्म की दूकानें और कार्यालय हैं। दक्षिणी भाग में नदी की दूसरी ओर, स्टाडेन द्वीप है। इसी पर स्वीडन का संसद भवन स्थित है और उससे आगे प्राचीन दुर्ग के स्थान पर एक अत्यन्त भव्य राज प्रासाद खड़ा है— रायल पैलेस। जिन दिनों यहाँ स्वीडन के नरेश नहीं रहते, उन दिनों इसके कुछ कक्ष सर्वसाधारण के देखने के लिये खोल दिये जाते हैं। इसमें एक संग्रहालय भी है जिसमें भूतपूर्व राजा रानियों के इस्तेमाल की वस्तुएं और अस्त्र शस्त्रादि संगृहीत हैं।

स्टाडेन ही स्टॉकहोम का सबसे पुराना भाग है। उसकी कई गलियाँ बड़ी घुमावदार और इतनी सँकरी हैं कि ऊपर की मंजिलों के लोग खिड़कियों से गलियों के आर पार हाथ मिला सकते हैं। यहाँ काशी की गलियों की याद ताजी हो उठी। मुख्य धन्धा नावों पर माल चढ़ाने उतारने का है। नदी के किनारे हर वक्त माल असबाब से लदी नावें दिखाई पड़ती हैं।

किनारे पर ही स्थान स्थान पर बाजार लगे हैं। भड़कीले रंगों की रंग बिरंगी छतरियों के नीचे सजी दूकानें बड़ी चित्र विचित्र लगती हैं। यहाँ एक और भी विचित्रता देखी। कुछ दूकानों पर काँच की बड़ी बड़ी पेटियों में मछलियाँ तैरती रहती हैं और गृहिणियाँ जिन्दा मछलियों में से ही खाने के लिये चुन लेती हैं।

इस द्वीप का मध्य भाग कुछ ऊँचा है। यहाँ मध्य में स्टॉकहोम का प्राचीनतम कथीड्रल खड़ा हुआ है। इसी में काठ पर अंकित सन्त जार्ज और अजगर (सेंट जार्ज एण्ड द ड्रगन) की एक प्राचीन मूर्ति भी देखी।

स्टॉकहोम में तीन रंग की ट्रामगाड़ियाँ ही आवागमन का मुख्य साधन हैं। ये ट्रामगाड़ियाँ काफी तेज रफ्तार से चलती हैं। आम जनता के रहन-सहन के स्तर की दृष्टि से स्वीडन और स्विटज़रलैण्ड की गिनती संसार के सर्वाधिक सम्पन्न देशों में की जाती है। स्टॉकहोम में मैंने रेडियो से सुसज्जित अनेकानेक 'मर्सीडीज' और हम्बर जैसी महँगी मोटरगाड़ियाँ टैक्सियों में चलती हुई देखीं।

शहर के मध्य भाग से ट्राम द्वारा न्यिर पार्क पहुँचा। यहाँ स्कान्सन देखा। यह एक बड़ा विलक्षण संग्रहालय है। इसमें स्वीडन भर के विभिन्न प्रदेशों के विभिन्न वास्तु शैलियों के पूरे पूरे मकान लाकर रखे गये हैं। यहाँ सदियों पुरानी पवन चक्कियाँ, लकड़ी के बने गिरजे, लैप लोगों की झोपड़ियाँ और विभिन्न इमारतें मौजूद हैं। अधिकांश मकानों में उनके निर्माण के काल की ही बनी मेज,

चित्रों और गहने आदि रखे हैं। विभिन्न प्रदेशों की पोशाकों, पुराने सामानों का भी ध्यान रखा गया है।

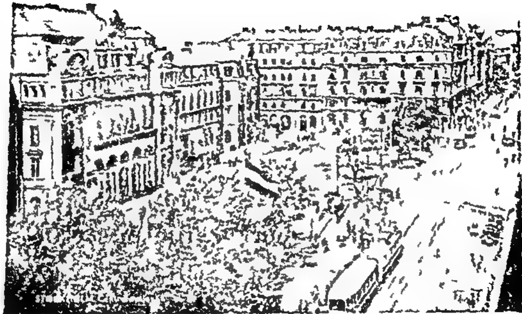
इसमें एक चिड़ियाघर भी है जिसमें बर्फ़ीले प्रदेश के बाहर के पशु-पक्षी रखे गए हैं। पूरा वातावरण इस प्रकार बनाया गया है कि प्राकृतिक वातावरण के साथ मेल उत्पन्न हो गया है। वहाँ भी कृत्रिमता नहीं आ पाई है।

स्टॉकहोम की सबसे सुन्दर इमारत है टाउन हॉल। यह आधुनिक वास्तुकला का एक उत्कृष्ट उदाहरण है और इसके शिल्प संसार भर में प्रसिद्ध हैं। इसके निर्माण में बारह वर्ष लगे थे। यह इमारत मालार झील के किनारे एक विशाल प्लेटफार्म पर बनाई गई है। भीतर के एक-एक कमरे की सजावट से इसकी शोभा और महत्ता की अभिव्यक्ति स्पष्ट हो जाती है। इसकी छत पर खड़े होकर उत्तर के वेनिस—स्टॉकहोम—को देखा तो घुमावदार नदियाँ, नालियाँ, नहरें, हरे भरे पार्कों, ऊँची इमारतें, रंग बिरंगे दर्शनीय दुकानों और नौकाओं का दृश्य बड़ा ही अद्भुत लगा।

नारविक जाने के लिए मैंने पूर्वी समुद्र वाला रास्ता अर्थात् स्टॉकहोम से बोडन होते हुए किरुना के रास्ते नारविक जाने का मार्ग। तीसरे दर्जे का टिकट लेकर २३ अप्रैल की रात को ८ बजे ट्रेन में सवार हुआ। यहाँ के तीसरे दर्जे का किराया हमारे यहाँ के पहले दर्जे के किराये के लगभग है पर उसमें आराम और सुविधाएँ बहुत ज्यादा हैं। पूरी ट्रेन में गैस के जलने द्वारा ताप नियन्त्रण की व्यवस्था थी। घण्टी बजाते ही ट्रेन का एक कर्मचारी हाजिर हो जाता। रात को सोने के लिए बिस्तर तैयार मिलता और साथ ही तौलिया तथा पानी का इन्तजाम भी। पाश्चात्य देशों में कहीं भी बिस्तर ढोने की मुसीबत नहीं उठानी पड़ती क्योंकि जहाज, हवाई जहाज तथा ट्रेन आदि की यात्रा में या होटल में जहाँ भी ठहरिए वहीं साफ-सुथरे बिस्तर तैयार मिलते हैं।

ट्रेन में भोजन आदि की व्यवस्था भी थी। निरामिष होने के बावजूद मुझे असुविधा नहीं हुई। दूध, पाव रोटी और मक्खन पर्याप्त मात्रा में मिल गया। यह ट्रेन पूर्वी तट के समानान्तर बोडन तक जाती है।

स्वीडन के इस भाग में बहुत सुन्दर प्राकृतिक दृश्य देखने को मिलते हैं। इस प्रदेश में घने जंगल हैं और यह वनों की उपज तथा शिल्पोद्योग से सम्पन्न है। इस प्रदेश में बड़े-बड़े जंगल, नदियाँ और बन्दरगाह हैं। पश्चिम में नार्वे के पर्वतों से नदियाँ निकलकर स्वीडन के आर-पार पूर्व में बोथनिया की खाड़ी में गिरती हैं। इन नदियों में जंगलों से काट छाँट कर लट्ठे बहा दिये जाते हैं जो बहते हुए



स्वीडन की राजधानी स्टाकहाम



ओसलो का राजमहल

कारखानों में पहुँचते हैं। वहाँ इन्हें काटकर समान बनाकर, निर्यात के लिए बन्दरगाहों में भेज दिया जाता है। लकड़ी का उपयोग कागज बनाने में भी होता है। स्वीडन का कागज संसार भर में प्रसिद्ध है। नदियों के प्रवाह को रोककर विद्युत् शक्ति का उत्पादन किया जाता है जिससे बड़े-बड़े कारखाने चलते हैं।

स्वीडन पर प्रकृति की बड़ी कृपा है। स्वीडिश भी प्रकृति के प्रति अनुदार नहीं हैं। वे जंगल में पेड़ों पर आरा तो चलाते हैं परन्तु उनके विकास की भी व्यवस्था करते हैं। वे नदियों के प्रवाह को बाँध बनाकर रोकते हैं पर इस बात का भी ख्याल रखते हैं कि बाँध के कारण आगे चलकर खेती या जमीन पर प्रतिकूल प्रभाव न पड़े। यही कारण है कि आज स्वीडन कागज और लकड़ी के उद्योग में संसार के अग्रणी देशों में गिना जाता है साथ ही कृषि के क्षेत्र में भी उन्नति की ओर अग्रसर हो रहा है।

स्वीडन को प्रकृति से एक और वरदान मिला है, बहुत अच्छी किस्म का लोहा। यूरोप में सबसे अधिक लोहा इसी देश में होता है। यहाँ लोहे की खानें अधिकांशतः दो स्थानों में हैं मध्यभाग तथा उत्तर के लैपलैण्ड में। स्वीडन प्राचीन काल में ही लौह-उद्योग में अन्य देशों से बढ़कर रहा है। आज भी उत्तम कोटि के लोहे के लिए स्वीडन का लोहा मानना पड़ता है। स्वीडन को समृद्ध बनाने और विकसित बनाने में कागज और लकड़ी की भाँति लोहा भी मदद कर रहा है।

यात्रा काफी आरामदेह थी। शीशे की खिड़कियों पर काले पर्दे बाहर की रोशनी से बचाव कर रहे थे। इसलिए नींद में बाधा नहीं पड़ी। प्रातः ८ बजे नींद खुली। रात भर में लगभग ७०० मील उत्तर की ओर आ गया था क्योंकि स्वीडन की ट्रेनें अपनी तेज रफ्तार के लिए विश्वविख्यात हैं। सुबह की ठण्डी हवा में ताजगी थी। एक अपूर्व स्फूर्ति अनुभव हुई। चटपट तैयार हो गया। शीशे से काला पर्दा हटाकर बाहरी दृश्य देखने लगा। बाहर तेज धूप छिटक रही थी और धरती अप्रैल के उस अंतिम सप्ताह में भी बर्फीली चादर से ढकी नजर आ रही थी। मीलों तक जंगल और ऊँचे-ऊँचे पेड़ थे। कहीं कोई कस्बा नहीं दीख पड़ता था, बल्कि कभी-कभी छोटे-छोटे गाँव आँखों के सामने आकर तुरन्त ओझल हो जाते थे।

ट्रेन ९ बजे बोडेन पहुँची। यह उत्तरी स्वीडन का बड़ा रेलवे जंक्शन है साथ ही सैनिक केन्द्र और एक औद्योगिक नगर भी। स्टाकहोम से यहाँ तक यह ट्रेन एक्सप्रेस रहती है पर इसके आगे पैसेंजर हो जाती है क्योंकि उत्तर के इस प्रदेश में यात्रियों का आवागमन कम रहता है। यहाँ से उत्तर-पश्चिम की ओर

किरूना होते हुए नारविक तथा लेनिनग्राड की ओर मुरमान्स्क के बन्दरगाह पर पहुँचा जा सकता है।

बोडन से छूटने के कोई ६० मील की दूरी होगी कि सहसा पत्थरों की बनी एक सीमा रेखा दिखाई पड़ी। मैं सोच ही रहा था कि स्वीडन की सीमा का अन्त तो अभी नहीं होना चाहिए, फिर यह सीमा रेखा यहाँ कैसे? इतने में ही एक बोर्ड मोटरों के सामने से गुजरता दिखाई पड़ा। अंगरेजी तथा अन्य ४ भाषाओं में उस पर लिखा था— उत्तरी वृत्त। मैं बात समझ गया। मुझे अनुभव हुआ कि मैं अब ध्रुवीय प्रदेश लैपलैण्ड में पहुँच गया हूँ जहाँ गर्मियों में सूर्यास्त होता ही नहीं।

दूसरे दिन सवेरे ७ बजे किरूना पहुँचा। यही हमारा अन्तिम स्टेशन था। नक्शे में किरूना को देखने से ऐसा लगता है कि स्वीडन के सुदूर उत्तर लैपलैण्ड में यह छोटा सा कस्बा है, पर वास्तव में यह जानकर आश्चर्य होगा कि यह इतना बड़ा शहर है कि संसार के बड़े बड़े शहर जैसे लन्दन, न्यूयार्क, पेरिस तथा बर्लिन आदि की लम्बाई चौड़ाई इसके सामने कम है। यद्यपि इसकी आबादी सिर्फ १८ ००० है पर इसका क्षेत्रफल है ३ ००० वर्ग मील। यह किरूना-वारा और ल्यूसावारा की पर्वतों की तलहटी में बसा है। इन पहाड़ों में विशेषज्ञों द्वारा लगभग ५० करोड़ टन लोहा होने का अनुमान लगाया गया है। शहर में लोहे की बड़ी बड़ी भट्टियाँ हैं जहाँ शोधन और ढलाई का काम होता है। इन्हें देखकर हमारे देश के जमशेदपुर का स्मरण हो आता है। शहर में अधिकांश मजदूर व्यापारी उद्योगपति लैप तथा थोड़े-बहुत स्वीडिश पर्यटक भी मिलेंगे।

सामान स्टेशन पर रखकर मैं शहर देखने निकला। मैंने जीवन में पहले पहल लैपों को उनकी जातीय पोशाक में यहाँ देखा। उनका लाल, पीला या नीला धारियादार लिबास उनके स्वस्थ सुगठित शरीरों पर खूब फब रहा था। शक्ल सूरत में लैप मुझे एशियाई लगे। उनकी मंगोलियन आँख और छोटी नाक इस बात की पुष्टि करती है। अनुमान है कि उत्तरी स्कैण्डिनेविया में बसे इन्हें हजारों वर्ष हो गये होंगे। स्वीडन में इनकी संख्या १० ०००, नारवे में २० ०००, फिनलैण्ड में २,५०० और साइबेरिया में करीब २ ००० है। आम तौर पर इनके रहन सहन के तौर तरीके देखकर यह धारणा बनती है कि ये लोग अपनी आदिम आदतों और तरीकों को छोड़ना नहीं चाहते। वे विज्ञान के इस आधुनिक युग में भी उनसे चिपके हुए हैं। मैं तो यह समझता हूँ कि भले ही इनके जीवनयापन की प्रणाली को आदिम कहा जाये पर है यह तरीका सही क्योंकि जिस वातावरण, जलवायु और जिन परिस्थितियों में उन्हें जिन्दगी बितानी पड़ती है, उसे देखते हुए सम्भवत इससे अधिक अनुकूल,

उपयोगी और सुविधाजनक मय नगीके अपनाये नहीं जा सकते। सबसे बड़ी खूबी इनकी यह है कि अपनी आवश्यकताओं के लिए लप का हम सभ्य कहलानेवाले लोगों की तरह परमुखापेक्षी नहीं रहना पड़ता। वे सिर्फ नमक और काफी के लिए बाहरी दुनिया पर निर्भर करते हैं।

किरूना में लैपों की एक अच्छी सराय है। जहाँ वे काफी और शराब के प्यालों पर जुटते हैं मैं भी घूमते-घामते वहां पहुंचा। बड़ी इच्छा थी इन्हें पास से देखने-समझने की। वहां एक सुशिक्षित लप से भेंट हो गयी। वह अंगरेजी थोड़ी-बहुत जानता था। उसी के माध्यम से उससे बात कर लपों के बारे में काफी जानकारी पायी। लैप जाति आदिम है। उनकी अपनी कोई सभ्यता नहीं है, पर वे खूब जानते हैं परिस्थिति और वातावरण के साथ में ढल जाना। साधारणतः प्रत्येक लप ३ नहीं तो कम से कम २ भाषायें जानता है। इनमें कई ऐसे हैं जो डाक्टर हैं स्कूल-कालिजों या विश्वविद्यालय में अध्यापक हैं। किन्तु अपनी बात और अपने लोगों के प्रति जिस प्रकार का लगाव हम लोगों में रहता है उसी प्रकार का लपों में भी है। वह भले ही डाक्टर इंजीनियर या प्रोफेसर बन जाय, उसका मोह उस स्वजनों की ओर बराबर खींचता रहता है। वस्तुतः ऐसे लप भी हैं जो आधुनिकता से पिण्ड छुड़ाकर अपने उसी कठोर जीवन में चले आये हैं और सचमुच उसमें वे सुख शान्ति और आराम का अनुभव करते हैं।

रेगिस्तान में जैसे ऊँट सबसे बड़ी सम्पत्ति और जहाज है वैसे ही बर्फानी प्रदेश में रेनडियर है। यह हमारे देश के बारहसिंगे जैसा होता है। हमारे देश में प्राचीन समय में जिस प्रकार गाय की महत्ता जीवन के विविध अंगों में थी, और अब भी है ठीक उसी प्रकार रेनडियर की महत्ता लप जीवन में है। इनकी आर्थिक और सामाजिक स्थिति इसी के सहारे टिकी हुई है। बर्फानी प्रदेश का यह पशु बर्फ के बीच जमनेवाली काई जैसी घास खाकर ही जीवित रहता है। लपों को इससे अपना आहार और दूध प्राप्त होता है। ये इसका मांस तो खाते ही हैं, उपरान्त अस्थियाँ और चर्बी मज्जा तन्तु रोयें और चमड़े तक को काम में लाते हैं। सींग और हड्डियों से हथियार, औजार और दस्तकारी की कलापूर्ण वस्तुएं बनाते हैं, मछली मारने के लिए इसकी खाल का उपयोग नाव बनाने में करते हैं। यहाँ तक कि गाड़ी के रूप में अपना तम्बू सींग में उपयोग करते हैं, जिसे रेनडियर आवश्यकतानुसार इधर से उधर ढोते हैं।

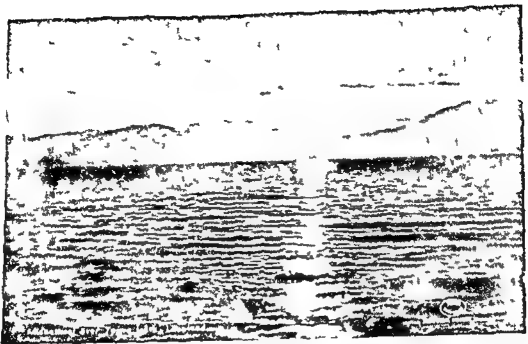
स्वीडन की सरकार ने लपों को समान नागरिक अधिकार दे रखे हैं। यही नहीं उनकी शिक्षा-दीक्षा की भी समुचित व्यवस्था है।

बाजार में अपने रात्रि भोजन के लिए कुछ दाल-चावल और सब्जियां लेना चाहता था। शहर में सभी सुविधायें अन्य आधुनिक शहरों की तरह हैं। वैसे तो अंगरेजी समझनेवाले आपको मिल ही जायेंगे पर मुझ योगी पेट के लिए दिक्कत महसूस हुई। ख्याल आया कि जिसमें पूर्ण वहीं मेरा बात न समझ और लाचारी जाहिर करता हुआ माफी मांग ले। सोचने लगा कि स्वीडिश और अंगरेजी भाषा का रास्ता तो एक ही भाषा में है। आपस में बात भले ही न करें पर क्या इतनी दूर हैं कि परस्पर समझना भी कठिन है। संस्कृत से निकला हमारा हिन्दी [illegible] अपना बहिना गुजराती बंगला मराठी असमी वगैरह से इतनी मिलती जुलती है कि इनके बोलनेवाले को भाषा बोल चाहे न सकें, पर समझ तो लेते ही हैं। अंगरेजी की असफलता से परेशान में था कि अंगरेजी जाननेवाले एक पादरी महाशय मिल गये। उन्होंने मेरे ऊपर बड़ी कृपा की। सारा सामान साथ रहकर खरीदवा दिया। इतना ही नहीं अपने घर पर भी आमंत्रित किया। विदेश में उनके घर पर स्वजनों जैसा जो स्नेहपूर्ण व्यवहार मिला वह मुझे आज भी याद है। उन्होंने मुझे स्टेशन तक पहुँचाने का भी कष्ट उठाया।

मैं उनसे विदा लेकर नारविक जानेवाली ट्रेन में बैठा। किरूना पीछे छूटता जा रहा था। तरह-तरह के विचार मन में उठ रहे थे। घण्टे दो घण्टे में स्वीडन भी छूट जायगा।

१० बजे रात को नारविक पहुंचा। नारवे के उत्तरी भाग में यह एक प्रमुख व्यापारी केन्द्र तथा बन्दरगाह है। ध्रुवावलीय प्रदेश में होने पर भी यह बन्दरगाह बारहों महीने जहाजों के आवागमन के लिए खुला रहता है। इसका कारण एटलांटिक महासागर के बीच से बहती हुई वह उष्णधारा है जिसे गल्फ स्ट्रीम कहते हैं। वह इस बन्दरगाह के पास से गुजरती है और यहां बर्फ नहीं जमने देती। नारविक बन्दरगाह से नारवे अपने यहां का तथा स्वीडन का भी लोहे का सामान और लकड़ी विदेशों को निर्यात करता है। इस नगर को पिछले महायुद्ध में जर्मनों ने बुरी तरह तहस-नहस कर दिया था किन्तु अब नारववासियों के धैर्य और अध्यवसाय के कारण यह पुनः उठ खड़ा हुआ है। प्रतिवर्ष हजारों की संख्या में यात्री निशा-सूर्य देखने यहां पहुँचते हैं। इसी कारण पर्यटक अथवा यात्रियों के लिए व्यापारिक संस्थानों एवं सरकार द्वारा यथोचित प्रबन्ध किया गया है। अच्छे अच्छे होटल तथा यातायात की समस्त सुविधायें यहाँ बड़ी सरलता से उपलब्ध हैं।

निशा-सूर्य देखने के लिए स्वीडन तथा नारवे दोनों ही देशों में ट्रेनें



अर्द्ध रात्रि का सूर्य



अत्यधिक सर्दी होन पर भी भूमि हरी भरी है



आर्कटिक बस्त का एक स्टशन



...प बच्चे अध्यापिका के साथ

हवाई जहाज, बस आदि बराबर नियमित रूप से राजधानी से ध्रुवाचल तक आया-जाया करते हैं। हवाई जहाज से तो ६ घण्टे में ही देखकर वापस आया जा सकता है। स्टॉकहोम के हवाई अड्डे से १० बजे रात को हवाई जहाज रवाना होता है और ध्रुवाचल में आपको निशा-सूर्य का दर्शन कराकर पुनः ३-३० बजे स्टॉकहोम वापस ले आता है। उत्तर की ओर बढ़ने पर अधिकाधिक उजाला मिलता जाता है।

जिस समय रात में नारविक पहुँचा उस समय भी दिन की तरह प्रकाश था। विचार आया कि उत्तर की ओर जरा बढ़कर पृथ्वी का अंतिम गाँव हैमरफास्ट भी देख लिया जाय किन्तु विचार त्याग देना पड़ा। कुछ सफर की थकावट, कुछ साथियों का अभाव इन सबने उत्साह ठण्डा कर दिया। दूसरे दिन सवेरे की ट्रेन से दक्षिण की ओर नारवे की राजधानी ओसलो के लिए रवाना हो गया।

मुझे जितना मनोरम दृश्य किरूना और नारविक के बीच सफर में देखने को मिला उतना विदेशों में अन्यत्र कहीं नहीं मिला। मार्ग में तोर्नेत्रास्क झील का पानी जमकर चट्टान-सा बन गया था। लोग मछुए इस पर तम्बू डालकर रह रहे थे। यहीं जीवन में सर्वप्रथम निशा-सूर्य का आनन्द लिया। सूर्य यहाँ मई से जुलाई तक अस्त नहीं होता। अतः यहाँ सूर्यास्त के घण्टे भर पहले सूर्य में जैसी आभा रहती है वैसी ही आभा रात को १२ बजे मुझे दिखाई पड़ी। क्षितिज से कुछ ऊपर को उठा हुआ वह मुस्करा रहा था। उसके दर्शन मात्र से मेरा शरीर पुलकित हो उठा। मैं समझ न पाया कि प्रकृति की इस अद्भुत लीला-स्थली के दमकते हुए उस प्रकाश-पुञ्ज को क्या कहूँ—दिवाकर, निशाकर या प्रभाकर? अखिल विश्व के सूत्रधार के प्रति मन श्रद्धानत हो उठा।

जैसा कि पहले बताया जा चुका है डच बड़े कष्टसहिष्णु होते हैं। साथ ही वे बड़े सैलानी कलाप्रेमी खाने-पीने के शौकीन और फूलों के अनुरागी भी कम नहीं होते। हर एक नागरिक के घर में फूलों का एक छोटा-सा बगीचा और कुछ हाथ की बनी तस्वीरें मिलेंगी चाहे वे सुप्रसिद्ध चित्रकारों की हों अथवा उनकी स्वयं की बनाई हुई।

यहाँ वर्ष में कई बार फूलों की प्रदर्शनियाँ होती हैं, जिनमें अच्छे फूलों पर इनाम दिये जाते हैं। इस तरह हालैण्ड को फूलों के व्यापार से भी बड़ी आमदनी हो जाती है। प्रदर्शनी में आये हुए फूलों के पौधों में से किसी किसी के तो बीस हजार रुपया तक दाम लग जाते हैं।

हालैण्ड और डेनमार्क में साइकिलों का बड़ा प्रचलन है। छुट्टी के दिन यदि साधारण सीधी धूप निकल आती है तो हजारों की संख्या में वे बाल-बच्चों के साथ साइकिलों पर सवार होकर दूर समुद्र-तट या डाइक पर सैर के लिए चल जाते हैं। एक साइकिल पर पति-पत्नी और दो बच्चों का बैठना तो साधारण बात है। इस दृश्य का अन्दाज नई दिल्ली की उन सड़कों से लगाया जा सकता है जहाँ दफ्तरों की छुट्टी के समय सड़कें अनगिनत साइकिल सवारों से भर जाती हैं।

हालैण्ड में गो-पालन भी एक मुख्य धंधा है। एक एक गाय से प्रतिदिन मन सवा मन तक दूध होता है। यहाँ की गायें हमारे यहाँ की भैंसों से भी बड़ी होती हैं। दक्षिण व उत्तरी अमेरिकावाले अच्छी नस्ल के बछड़े पैदा करने के लिए यहाँ से एक एक साँड पचास-साठ हजार रुपयों तक में खरीद कर ले जाते हैं। अपने यहाँ पिलानी (राजस्थान) में भी हालैण्ड का साँड है जिससे उत्पन्न गायों के ४५ पौण्ड तक दूध प्रतिदिन होता है।

यहाँ खेल-कूद भी जीवन का एक प्रमुख अंग है। वैसे तो सभी तरह के खेल होते रहते हैं परन्तु शीतकाल में जब नहरें और नदियाँ जम जाती हैं तब बर्फ पर स्की का खेल शुरू हो जाता है। इसी तरह गर्मी में इन्हीं नहरों में नावों की दौड़ और तैरने की प्रतियोगिताएँ होती रहती हैं।

हालैण्ड के सभी शहर समुद्र के किनारे बसे हुए हैं। इसलिए यहाँ समुद्र स्नान और तैरना जीवन का आवश्यक अंग हो गया है। हर जगह स्नान की समुचित व्यवस्था है। अन्य यूरोपीय देशों की तरह यहाँ हजारों की संख्या में लोग समुद्र-स्नान करते रहते हैं परन्तु यहाँ बर्लिन और मान्टे कार्लो की तरह स्त्री-पुरुषों को अर्द्ध-नग्नावस्था में नहीं देखा जा सकता। जन-जीवन सुखी

प्रतीत होता है, क्योंकि वस्तुओं का मूल्य, अन्य यूरोपीय देशों की अपेक्षा कम है। खास कर दूध, दही, पनीर, मक्खन और फल बहुत ही सस्ते हैं।

इस छोटे से देश में २४० संग्रहालय (म्यूजियम) हैं जिनमें से हेग, एम्सटर्डम और रोटरडम के संग्रहालय तो विश्व विख्यात हैं।

यद्यपि इंगलैण्ड की तरह हालैण्ड भी एक साम्राज्यवादी देश है तथापि दोनों के वर्तमान शासकों के रहन सहन और शान शौकत में बहुत अन्तर है। ब्रिटेन की महारानी का निजी खर्च प्रतिवर्ष करोड़ों रुपये बैठता है जब कि हालैण्ड की महारानी जुलियाना अपने ही साधारण ढंग से अपने पति और बच्चों के साथ हेग के एक देहाती भवन में रहती हैं। उनकी तीन लड़कियाँ पब्लिक स्कूल में आम बच्चों के साथ ही पढ़ती हैं।

मैं सर्वप्रथम एण्टवर्प से ट्रेन द्वारा रोटरडम गया। रास्ते में एक सीमा चौकी पर पासपोर्ट की जाँच की गयी। हमारे देश की चौकियों की तरह यहाँ माल असबाब उलट पलट और अव्यवस्थित नहीं किया गया और न वस्त्र खुलवाकर नंगा भाड़ी ही ली गयी। इसका कारण यही है कि इन देशों के आपसी सम्बन्ध अच्छे हैं और लोगों का नैतिक स्तर भी ऊँचा है। यहाँ पूर्वी देशों जैसा तस्कर-व्यापार नहीं होता।

रोटरडम नगर की आबादी करीब दस लाख है। द्वितीय महायुद्ध में जर्मनों ने बमबारी से कुछ दिनों में ही इसके दस हजार मकान और तेरह सौ कारखाने नष्ट कर दिये थे। इससे जो हानि हुई उसका अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है। परन्तु लड़ाई की समाप्ति के पश्चात् बड़ी शीघ्रता से रोटरडम का पुनर्निर्माण हुआ और अल्प समय में ही वह पहले से अधिक सुन्दर और समृद्ध बन गया। यह डचों की परम्परागत परिश्रमशीलता का परिचायक है।

समुद्र के किनारे और राइन तथा मास नदियों के मुहाने पर स्थित होने के कारण, रोटरडम विश्व के सर्वोत्तम बन्दरगाहों में गिना जाता है। उत्तरी जर्मनी और स्विटजरलैण्ड के आयात निर्यात के लिये यह एक बड़ा बन्दरगाह है और इसे भी उन देशों के विकास का लाभ मिल रहा है।

रोटरडम बन्दरगाह के गोदामों में आठ करोड़ मन माल रखने की जगह है। यहाँ प्रतिदिन तीस लाख मन माल चढ़ाया-उतारा जाता है। इस काम के लिए ३८० छोटी बड़ी क्रेन मशीनें लगी हुई हैं। बन्दरगाह के अनुरूप ही, यहाँ विशाल रेलवे स्टेशन है जहाँ केवल माल असबाब उतारने चढ़ाने के लिए साइडिंग्ज की लम्बाई १२८ मील है।

ऊपर हम उल्लेख कर आये हैं कि डच लोग फूलों के बड़े शौकीन होते हैं। उन्होंने सुन्दर तरीके से इस शौक को रूप में आमदनी का एक स्रोत भी बना लिया है। कारनहाफ शहर में सिर्फ फूलों के ही बाग हैं जहाँ नीरड़ा तरह से उन पर प्रयोग और परीक्षण होते रहते हैं। जैसे विभिन्न नस्लों के पशुओं की मिश्रित जातियाँ तैयार की जाती हैं वैसे ही भिन्न भिन्न जाति के पौधों की कलमों के चश्म चढ़ाकर नाना प्रकार के रंगों और आकृतियों के फूल उपजाये जाते हैं, जिन्हें लेकिन विदेशों से खासी की संख्या में यात्री आते रहते हैं। कारनहाफ के समीप ही आल्समीर नामक शहर में इन फूलों का नीलाम प्रति सप्ताह होता है। इस शहर का अस्तित्व ही यदि फूलों के इस व्यापार पर आधारित कहा जाय तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी। फूलों के निर्यात से हालैण्ड को बीस करोड़ रुपयों की वार्षिक आमदनी हो जाती है।

एम्सटर्डम हालैण्ड की व्यापारिक राजधानी तथा सबसे बड़ा शहर है। आज से ५०० वर्ष पहले जहाँ दलदली जमीन और छिछले पानी का जमाव था, वहीं डचों ने इतना सुन्दर और विशाल नगर बना लिया है कि इसको यूरोप का दूसरा वेनिस कहा जाता है। स्वच्छता, मकानों की सुन्दरता और सड़कों की चौड़ाई में तो यह वेनिस से भी बढ़ा-चढ़ा है। वेनिस को यदि हम भारत का वाराणसी कहें तो इसे सहज ही बंगलौर की उपमा दी जा सकती है।

सुबह ही जलपान से निवृत्त होकर शहर देखने निकला। होटल के सामने की नहर में एक मोटर-बोट खड़ा देखा जिसमें लोग सवार हो रहे थे। मैंने समझा कि यह भी कोई किराए का बोट है अतः मैं भी उसमें जा सवार हुआ। कोई पन्द्रह मिनट बाद करीब ८० यात्रियों को लेकर बोट कई नहरों से गुजरता हुआ खुले समुद्र में पहुँच गया। मैंने साथ के यात्रियों से पूछने की चेष्टा भी की कि हम जा कहाँ रहे हैं। परन्तु अंगरेजी योरप के खास खास होटलों व बड़ी-बड़ी दूकानों के अलावा और कहीं काम नहीं देती। डच मैं जानता नहीं था लाचार होकर चुपचाप बैठा रहा।

कुछ देर बाद मोटर-बोट अथाह जलराशि के किनारे एक टापू के पास जाकर रुका। वहाँ एक जहाज बनाने का बड़ा कारखाना था। सब यात्री बोट से उतर पड़े केवल मैं ही रह गया। समझ नहीं पड़ रहा था कि वास्तविकता क्या है। संकेत की भाषा में बोट चालकों को समझाया कि मुझे तो वापस शहर जाना है परन्तु सफलता नहीं मिली। सौभाग्य से वहाँ पर कारखाने में अंगरेजी जाननेवाला एक कर्मचारी मिल गया। उसने बताया कि यह बोट तो इस जहाजी कारखाने के कर्मचारियों को शहर से लाने और ले जाने के लिए है। यह इस

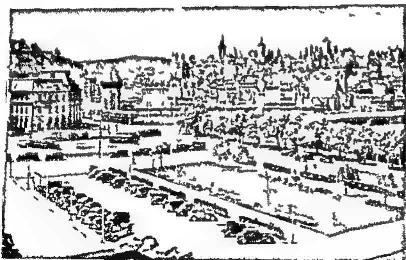
लेकर शाम को ही वापस लौटेगा। अब मेरी समझ में बात आई कि मुझे भी कारखाने में जाने वाला समझकर न तो किराया ही माँगा गया और न जाने की जगह का नाम ही पूछा गया। बड़े असमंजस में पड़ा। शहर से मीलों दूर समुद्र के बीच। भूख भी बड़ी जोर की लग रही थी। कोई एक घण्टे बाद सामने से एक बस आती आया। संयोग से वह यात्री-बोट था। उसमें बैठकर करीब दो बजे वापस एमस्टर्डम पहुँचा और आते समय डेढ़ रुपया किराये का भी देना पड़ा। इसके बाद तो यात्रा-सहायक केन्द्र पर जाकर सारी बातों की जानकारी कर ली और वहीं से शहर का एक नक्शा भी ले लिया।

एमस्टर्डम की एक छोटी सी घटना मैं आज भी नहीं भूल पाता। एक महिला से मैंने किसी रास्ते का पता पूछा जो उसने संकेत से बता दिया। थोड़ी दूर जाने के बाद पीछे से एक आदमी दौड़ता हुआ आया और टूटी-फूटी अंग्रेजी में बताया कि मेरा रास्ता उस तरफ न होकर दूसरी तरफ से है। वह महिला भी उतनी ही देर तक वहीं खड़ी हुई मेरी तरफ देखती रही। जब मैं सही रास्ते की तरफ मुड़ गया तभी वह अभिवादन कर लौटी। संभवतः जो रास्ता बताया था उसमें भूल हो गयी थी और इसीलिए उसने उस आदमी को दौड़ाकर मुझे परेशानी से बचा लिया। इस घटना से हठात् मेरा ध्यान अपने देश के ऐसे लोगों की तरफ चला गया जो अपरिचित राहगीर का रास्ता पूछने पर या तो झिड़क देंगे या जान-बूझकर गलत रास्ता बता देंगे।

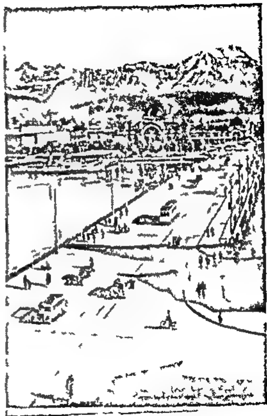
हालैण्ड में जाकर यदि जाइडरजी का बाँध और सीफोल का हवाई अड्डा न देखा जाये तो यात्रा अधूरी ही समझी जायेगी। जाइडरजी का बाँध १९२० में बनना शुरू हुआ और १९३२ में पूरा हुआ। यह २७ मील लम्बा है। एक तरफ अथाह खारा समुद्र है, तो दूसरी तरफ मनुष्य निर्मित मीठे पानी की झीलें व हरी भरी कृषि-योग्य उपजाऊ जमीन। बाँध की दीवार इतनी चौड़ी बनाई गई है कि उस पर एक साथ मोटर, साइकिल, पैदल चलनेवालों के लिए अलग-अलग सड़कें हैं। छुट्टी के दिन इस बाँध पर हालैण्ड के युवकों और युवतियों व बच्चों का मेला-सा लग जाता है।

इसी तरह सीफोल के हवाई अड्डे को भी दुनिया का आठवाँ आश्चर्य कहा जाय तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी। सौ वर्ष पहले जहाँ समुद्र लहरा रहा था वहाँ विश्व का सबसे बड़ा हवाई अड्डा बन जाना कम आश्चर्य की बात नहीं। प्रतिदिन सैकड़ों वायुयान यहाँ आते जाते हैं। उड्डयन के क्षेत्र में आज भी के० एल० एम० के हवाई जहाज और उनके उच्च चालक संसार में अपना सानी नहीं रखते।

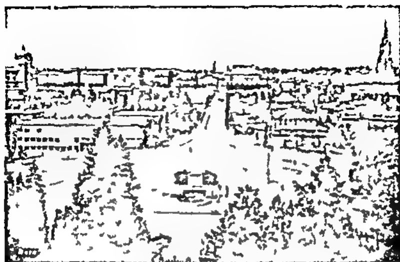
अन्त में यहाँ के विश्व प्रसिद्ध 'फिलिप्स' के कारखाने के बारे में भी दो शब्द लिखना अप्रासंगिक नहीं होगा। जहाँ फिलिप्स का कारखाना है वहाँ, जमशेदपुर की तरह आइन्डहोवन नाम का एक नगर ही बस गया है। पचास वर्ष पहले बहुत छोटे पैमाने पर इस कारखाने की नींव पड़ी थी। आज दुनिया में उसकी ७८ शाखाएँ हैं जिनमें एक लाख से भी अधिक आदमी काम करते हैं। फिलिप्स के रेडियो, माइक्रोस्कोप एवं बिजली के अन्य उपकरणों का वार्षिक उत्पादन करीब दो सौ करोड़ रुपये के मूल्य का होता है।



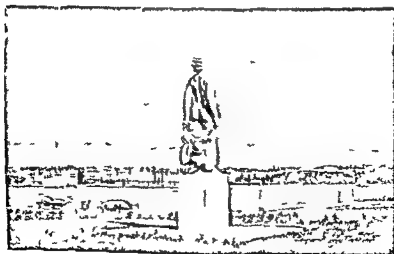
स्विटजरलंड का सब से बडा शहर ज्युरिख



आल्पस की गोद में बसा हुआ लूजन



स्विटजरलैंड की राजधानी बर्न



जिनेवा झील का नगर

भूलोक के नन्दन कानन

मैं दो बार स्विट्जरलैण्ड हो आया हूँ—पहले १०५० और फिर १९६२ में। पहली बार मुझे दो महीने रहने का अवसर मिला था। सारा देश घूमने के लिए पर्याप्त अवकाश था। प्राकृतिक सौन्दर्य देखने के साथ-साथ, मुझे स्विस जनता के निकट सम्पर्क में आने और उनका जीवन देखने-समझने का भी मौका मिला। प्राकृतिक छवि आकर्षक अवश्य लगी परन्तु मैं वहां के सामाजिक जीवन से कहीं अधिक प्रभावित हुआ। कमठ सामाजिक जीवन ही उस देश की सर्वांगीण उन्नति का मूल कारण है। काश्मीर में केवल प्रकृति मुस्कराती है स्विट्जरलैण्ड में प्रकृति और स्विस जनता दोनों ही मुस्कराते मिलते हैं।

आल्प्स की गोद में यह एक छोटा सा देश है। इसकी आबादी ५० ०० ००० ही है परन्तु यहां इतनी सी आबादी के लिए भी न तो पर्याप्त अन्न पैदा हो पाता है और न स्विस लोगों के पास खनिज पदार्थों का कोई भण्डार ही है जिससे अपने लिए खाद्य सामग्री तथा जीवन के अन्याय आवश्यक साधन पूरा करें।

इन लोगों ने इस समस्या का समाधान उत्तम ढंग से किया है। ये परिवार नियोजन द्वारा जन-संख्या की वृद्धि पर नियन्त्रण रखते हैं। इसी का परिणाम है कि पिछले युद्ध वर्षों के दौरान संसार के अन्याय देशों की जन-संख्या में पचास साठ प्रतिशत तक वृद्धि हो गई पर स्विट्जरलैण्ड की जन-संख्या अधिक नहीं बढ़ पाई।

खाद्य-सामग्री तथा जीवन के अन्याय आवश्यक साधन जुटाने के लिए इन्होंने निर्यात का मार्ग अपनाया है। इन्होंने अपने सभी शिल्पोद्योगों का यही एक उद्देश्य बना रखा है। विदेशों से कच्चा माल—जैसे लोहा, तांबा तथा अन्य आवश्यक खनिज पदार्थ—मंगाकर उनका तैयार माल—जैसे मशीनें घड़ियाँ दवाएं बिजली का सामान, इत्यादि—विदेशों को भेजते हैं। शिल्पोद्योग की इस नीति के कारण विदेशों से काफी धन मिल जाता है जिसका कुछ भाग खाद्य-सामग्री कुछ कच्चे माल के आयात और शेष राष्ट्र की समृद्धि पर व्यय किया जाता है।

स्विस सामाजिक जीवन की रीढ़ शिल्पोद्योग ही है। इसलिए यहां की जन संख्या का बयालीस प्रतिशत भाग किसी न किसी रूप में शिल्प से सम्बन्धित है। हर व्यक्ति की कार्य-कुशलता का बहुत ध्यान रखा जाता है। इनकी मान्य

इस बात की चिन्ता बनी रहती है कि इनकी वस्तुएँ अन्य देशों की वस्तुओं के मुकाबिले ऊँचे स्तर की और टिकाऊ सिद्ध हों। यही कारण है कि संसार भर में स्विट्जरलैण्ड में बने डीजल और मशीनों के बड़े-बड़े इंजनों से लेकर छोटी छोटी घड़ियों तक की माँग सबसे अधिक रहती है। अमरीका, फ्रांस और जर्मनी जैसे औद्योगिक राष्ट्रों के बीच भी स्विट्जरलैण्ड का एक अपना विशिष्ट एवं गरिमापूर्ण स्थान है।

इसका एक और भी कारण है। इन्होंने अपने उद्योग धंधों को अन्य देशों की भांति पूरी तरह पर मशीनों के हवाले नहीं किया है। इसीलिये इनकी बारीकी और टिकाऊपन का मुकाबिला करना कठिन होता है। यहाँ कुटीर शिल्प और उद्योग का बड़ा सुन्दर समन्वय मिलता है। उदाहरण के लिये एक घड़ी में १२६ से २०० तक पुर्जे लगते हैं और सामान्यतः हम समझते हैं कि इनके लिये वहाँ बड़े-बड़े कारखाने खड़े होंगे परन्तु मैंने ज्यूरा प्रान्त में हजारों कारीगरों को अपने अपने घरों में ही ये पुर्जे तैयार करते देखा है। हर कारीगर घड़ी का एक न एक पुर्जा तैयार करने में सिद्धहस्त होता है। इसीलिए अमरीका और ब्रिटेन की घड़ियाँ लाख कोशिश के बावजूद स्विट्जरलैण्ड की क्षमता और रौनक के आगे नहीं ठहर पातीं।

शिल्पोद्योग की यह नीति इतनी सफल रही कि आज स्विट्जरलैण्ड की आर्थिक स्थिति अत्यन्त दृढ़ हो गई है। पिछले वर्षों के दौरान बड़े बड़े राष्ट्रों के सिक्कों की कीमतों में काफी उतार चढ़ाव आये, परन्तु स्विस सिक्के की कीमत स्थिर बनी रही। इतना ही नहीं उनको अपनी अर्थ-व्यवस्था की दृढ़ता पर इतना भरोसा है कि वहाँ फ्री करेन्सी है अर्थात आप स्विस बैंकों में किसी भी देश की मुद्रा बदल सकते हैं। उनको इस बात का भय नहीं कि उनकी मुद्रा बाहर चली जायगी। यहाँ के बैंकों में विदेशी प्रचुर मात्रा में धन जमा रखते हैं परन्तु उन्हें इसके लिए सूद मिलना तो दूर रहा बल्कि उल्टा कुछ शुल्क देना पड़ता है।

द्वितीय महायुद्ध के फलस्वरूप सन १९५० में सारा यूरोप महँगाई के बोझ से दिन दिन अधिक दबता जा रहा था परन्तु स्विट्जरलैण्ड में महँगाई ज्यादा पैर नहीं पसार पाई। उन दिनों वहाँ कुछ अत्यावश्यक वस्तुओं के दाम इस प्रकार थे—दूध आठ आने सेर, दही बारह आने सेर, आटा एक रुपया सेर और सेव तीन आने का एक। उसके बारह वर्ष बाद सन १९६२ में जब मैं दूसरी बार गया मूल्यों में पचास प्रतिशत वृद्धि तो अवश्य हो गई थी फिर भी औसत आय के हिसाब से वे भारत के मुकाबिले बहुत कम थे।

वहा मजदूरी व काम की इतनी अधिक गुजाइश है कि पडाम के देशा मे भी लोग आकर मजे में जीविकोपाजन करने हैं। इटली और ग्रीम के लोग काफी सख्या में आते है। कहा-कही ता भारतीय डाक्टर भी बसे हुए है उनको प्रैक्टिस भी अच्छी चल निकली है।

एक स्विस परिवार में आम तौर से चार व्यक्ति होते हैं। प्रति व्यक्ति सात आठ सौ रुपय मासिक आय के हिसाब स पूरे परिवार की औसत आय तीन हजार रुपये तक बठती है। हमारे देश जसी इतनी आर्थिक असमानता भी वहा दिखाई नहा देता कि एक ओर तो असख्य परिवारा का एक जून खाना भी कठिन हो और दूसरी ओर एसे लोग भी हो जिनका मासिक आय बद्द लाख रुपय तक पहुँचती है। सम्पन्न से सम्पन्न स्विस परिवार की मासिक आय आय कर देने के बाद पच्चीस हजार रुपय स अधिक नहा बठती। अधिक असमानता न होने के कारण सामाजिक जीवन में भी विषमता नहा दिखाई पटती। जन जीवन सुखी है।

इनका आर्थिक और राजनीतिक दृष्टिकोण भी इतना स्पष्ट और स्वस्थ है कि आज व कम्युनिज्म को खुली चुनौती दे रह है। उनका मत ह राष्ट्र की उन्नति के लिए यह आवश्यक नहा कि व्यक्ति के श्रम का जबरन राष्ट्रीयकरण करके उस मनुष्य से मशीन का पुर्जा बना दिया जाय। स्विटजरलण्ड के सारे उद्योग धन्धे गैर सरकारी क्षेत्र म है केवल टाक-तार टेलीफोन और रेलवे सरकारी क्षेत्र में ह।

इन्होंने इसी तरह अपनी राजनीतिक समस्या का भी हल निकाल लिया है। सारा देश बाईस छोटे कैन्टनों (स्वतंत्र राज्य सरकारों) का एक सघ है। प्रत्येक केन्टन स्वतन्त्र है। उनके अपने अलग नियम और कानून बने हुए हैं। ये केन्टन कभी भी एक-दूसरे के मामलों में हस्तक्षेप नहीं करते यहाँ तक कि केन्द्र भी इनके मामलों में दखल नहीं देता।

स्विटजरलण्ड की सीमा जर्मनी फ्रास और इटली म मिली हुई है। उन देशों के लोग सदियों पहले यहाँ आकर बस गये थे। इसलिए यहाँ आज भी तीनों देशों की ही भाषायें बोली जाती हैं। इस बीच उन तीनों राष्ट्रों म अनेक बार भयानक युद्ध ठन चुके हैं नृशस रक्तपात हो चुका है पर स्विस राष्ट्रीयता के सगम पर जर्मन फ्रेंच और इतालियन सास्कृतिक धाराय अपना वैमनस्य भुलाकर त्रिवेणी बन गयी हैं।

उत्तर-पूर्व के जर्मन भाषी, पश्चिम के फ्रेंचभाषी और दक्षिण के इतालियन

भाषी स्विस नागरिकों के शरीर में चाहे जर्मन, फ्रेंच और इटालियन पूर्वजों का रक्त भले ही बहता हो, इनका अपने व्यक्तिगत जीवन में अपनी भाषा और संस्कृति पर कितना भी नाज क्यों न हो, किन्तु राष्ट्र का सवाल उठने पर वे सभी एक हो जाते हैं। वे सबसे ज्यादा जानते हैं कि हम स्विस हैं और स्विट्जरलैण्ड हमारा देश है। काश! हम भारतीयों में भी यह भावना इतनी ही गहरी होती!

स्विट्जरलैण्ड में जहाँ भी जाइए, सभी जगह कर्तव्य-बोध और नैतिकता की भावना दिखाई पड़ती है। लोग शान्ति प्रिय हैं। जियो और जीने दो के सिद्धान्त का प्रभाव इनके जीवन और विचारधारा में स्पष्ट झलकता है। चोरी और उचक्कापन का नाम नहीं। पेरिस और काहिरा की तरह, परदेशियों, बच्चों, बूढ़ों और स्त्रियों के ठग जाने का भय भी नहीं है। पुलिस का काम शान्ति बनाये रखना और लोगों की सहायता करना है। विदेशियों के निरन्तर आवागमन के कारण उनकी सहायता के लिये पुलिस विभाग का रहना बहुत जरूरी है।

मैंने इसका प्रत्यक्ष अनुभव किया है। एक बार मेरा पासपोर्ट खो गया था। चित्त उदास और परेशान था क्योंकि उसके बिना विदेशों में बड़ी कठिनाइयाँ उठानी पड़ती हैं। पासपोर्ट के साथ ही कुछ रुपये और कुछ जरूरी कागजात भी थे। चिन्ता में था, परन्तु दूसरे ही दिन सुबह की डाक से पासपोर्ट आ पहुँचा। सारे कागजात और रुपये ज्यों-के-त्यों थे। दूसरा कोई देश होता तो कागजात और पासपोर्ट भले ही मिल जाते, पर रुपये शायद न मिलते।*

मैं एक बार जिनेवा के एक कैफे में गया। खूँटी पर अपना फेल्ट हैट टाँगकर मैं टेबिल पर जा बैठा। काफी पीकर पैसे चुकाने के बाद जब चलने लगा तो देखा—हैट नदारद था। आश्चर्य तो हुआ पर चुपचाप अपने होटल लौट आया। दूसरे दिन जब फिर पहुँचा तो देखता रह गया। हैट उसी खूँटी पर ज्यों का-त्यों टंगा था, साथ में एक पुर्जा था— भूल के लिये खेद है।

स्विस लोगों में अनुचित लाभ उठाने की प्रवृत्ति भी नहीं दिखाई दी। इसका भी मैंने प्रत्यक्ष अनुभव किया है। मेरे छोटे भाई वपदिर की चिकित्सा के लिए लेजाँ में रहते थे। लेजाँ पहाड़ी पर बसा हुआ एक छोटा सा कस्बा है

---

* जिन सज्जन को मेरा पासपोर्ट मिला था उन्होंने भारतीय नाम देखकर उसे एअर इण्डिया के जिनेवा-कार्यालय में भेज दिया, जहाँ से वह मेरे पास भेजा गया था।

और अपने खास जलवायु के कारण तपेदिक की चिकित्सा का एक केंद्र भी। वहीं चिकित्सा के सिलसिले में, मुझे विश्वविख्यात चिकित्सक और शल्य शास्त्री डा० नेनेरे से मिलने का अवसर मिला था। उन्होंने मेरे भाई का आपरेशन किया था। आपरेशन काफी बड़ा था, परन्तु पारिश्रमिक के रूप में केवल बारह सौ रुपये लिये। वे आपरेशन के बाद भी पन्द्रह दिनों तक प्रतिदिन आकर रोगी को देख जाते थे पर अलग से उसकी कोई फीस उन्होंने नहीं ली। सहज ही मेरा ध्यान अपने गरीब देश के चिकित्सकों की बड़ी हुई फीस की ओर गया।

स्विट्जरलैण्ड सदा से शान्तिप्रिय और सही मायने में निरपेक्ष राष्ट्र रहा है। इसके सीमावर्ती देश सदियों से आपस में लड़ते झगड़ते और मार-काट करते रहे हैं, पर इसने कभी किसी का भी पक्ष नहीं लिया। यदि जर्मनी, इटली और फ्रांस जैसे शक्तिशाली राष्ट्र चाहते तो दो दो महायुद्धों के दौरान कभी भी अपने इस छोटे से पड़ोसी को कुचल सकते थे पर उनको भी इसकी निरपेक्षता का लिहाज करना पड़ा। उन्होंने एक ऐसे राष्ट्र की आवश्यकता महसूस की जहाँ बैठकर वे समझौते की बातचीत कर सकें। ऐसी स्थितियों में स्विटजरलैण्ड ने संदेशवाहक का काम करके विपक्षियों को एक-दूसरे के निकट आने का अवसर दिया। इसके अतिरिक्त जब युद्ध से जर्जर यूरोप के नागरिक अन्न-वस्त्र के अभाव में त्राहि त्राहि करने लगे, तब इस छोटे से राष्ट्र ने उनको अन्न-वस्त्र दिया और असहाय अनाथ बच्चों का पालन पोषण भी किया।

इस छोटे से राष्ट्र ने सेना का संगठन अपनी शान्तिप्रिय नीति के अनुकूल ही किया है। ये न तो किसी दूसरे देश पर अधिकार करने की इच्छा रखते हैं और न किसी दूसरे राष्ट्र का अधिकार अपनी धरती पर सहन करने को तैयार हैं। इनका समूचा सैनिक-संगठन सुरक्षा की दृष्टि से ही किया गया है। नियम के अनुसार, उन्नीस वर्ष से ऊपर के प्रत्येक स्विस नागरिक के लिए चार महीने की सैनिक शिक्षा अनिवार्य है। इसके अतिरिक्त इनको अभ्यास के लिये प्रतिवर्ष एक निश्चित अवधि तक सैनिक दस्ता में रहना पड़ता है। इस प्रकार प्रत्येक नागरिक एक समय सैनिक भी होता है। आवश्यकता पड़ने पर, स्विस सेना बात की बात में आधुनिकतम अस्त्रों से लैस होकर मातृभूमि की रक्षा के लिए सन्नद्ध हो सकती है परन्तु यहाँ की सरकार एक विशाल सेना रखने के व्यय भार से मुक्त रहती है। राष्ट्र का धन सेना और अस्त्र शस्त्रों पर खर्च न करके अन्य उपयोगी एवं उत्पादक कार्यों में लगाया जाता है।

स्विस लोगों का घरेलू जीवन भी यूरोप के अन्य देशों से थोड़ा भिन्न है। यहाँ फ्रांस जैसी स्वच्छन्दता नहीं। बातचीत, व्यवहार और काम के तरीकों में

एक नपी-संयमित गति रहती है। जीवन में स्वतन्त्रता है, पर पेरिस और बर्लिन जैसी उच्छृङ्खलता नहीं। स्विट्ज़रलैण्ड में जहाँ भी किसी स्त्री या पुरुष ने लक्ष्मण रेखा पार की वहीं वह लोगों की निगाह से गिर जाता है। समाज में स्त्रियों का दर्जा बहुत-कुछ भारत जैसा है। हमारे यहाँ स्त्रियों को मताधिकार प्राप्त है और वे राजनीति में भी दखल रखती हैं, परन्तु स्विस स्त्रियाँ इन दोनों से वंचित हैं।

स्विस लोगों का देश-विदेश के पर्यटकों से बरतना रोज का मामला हो गयी है। संसार के सभी देशों से लाखों पर्यटक यहाँ आकर प्रकृति की अनुपम छटा देखकर व्यस्त और त्रस्त जीवन से कुछ समय के लिये मुक्ति पाकर एक नवीन शक्ति संचय करते हैं। इन पर्यटकों के आदर-सत्कार का एक बड़ा अच्छा व्यवसाय है जिसमें जन-संख्या का काफी बड़ा भाग लगा हुआ है। स्विस लोगों ने अपने अन्य धन्धों की भाँति इसको भी एक सुव्यवस्थित रूप दे दिया है। सभी रमणीक स्थानों में गाइड और होटल मौजूद हैं। इसलिए पर्यटकों को यह नहीं लगता कि वे किसी अपरिचित और अनजान देश में आ गये हैं। सभी जगह स्वाभाविक मुस्कान के साथ उनका स्वागत किया जाता है। वे अपनी जेब के मुताबिक होटल चुन सकते हैं। दस से सत्तर रुपये प्रतिदिन तक के होटल मिलते हैं जिनमें रहने के साथ सुबह का नाश्ता शामिल रहता है।

सरकार भी पर्यटकों के लिये हर प्रकार की सुविधायें जुटाती है और सुव्यवस्था करती है। प्रत्येक स्टेशन पर 'स्टैंड बुफे' हैं जहाँ सस्ते दामों में अच्छा भोजन मिल जाता है। रेलवे की ओर से भी सस्ती दर पर पन्द्रह दिन तक 'इच्छानुसार यात्रा' के टिकट मिलते हैं जिन्हें लेकर आप कहीं भी जा सकते हैं।

यों तो स्विट्ज़रलैंड के सभी शहर और कस्बे आकर्षक हैं, स्विस जनता ने उनको करीने से सजाया सँवारा है, उनकी सफाई का पूरा ख्याल रखा है परन्तु मुझे जनेवा, बर्न, बेजल, ज्यूरिख और ल्यूजन विशेष सुन्दर लगे।

जनेवा अपने ही नाम की झील के दक्षिणी किनारे पर बसा हुआ है। शहर की आबादी तो डेढ़ लाख ही है पर इसका महत्त्व अन्तर्राष्ट्रीय है। प्रथम महायुद्ध के बाद लीग आफ नेशन्स का प्रधान कार्यालय यहीं स्थित था। आज भी संसार की बड़ी-बड़ी राजनीतिक समस्याएं हल करने के लिये विभिन्न राष्ट्रों के प्रतिनिधि और राजदूत यहाँ अधिवेशनों और सम्मेलनों में एक साथ बैठकर विचार करते हैं। ऐसे अधिवेशनों से संसार में स्विटज़रलैण्ड का यश बढ़ता है और यथेष्ट आर्थिक लाभ भी होता है।

बर्न के भारतीय दूतावास में मैंने अपने देश के प्रमुख नेताओं के चित्र देखे।

यूरोप में काफी लम्बे अर्से के बाद मुझे यहाँ के वातावरण में अपने देश की सहज आत्मीयता मिली। दूतावास यहाँ से एक बुलेटिन के रूप में भारतीय समाचार प्रकाशित करता है। स्विट्जरलैण्ड की राजधानी होने के अलावा यह एक प्रसिद्ध ऐतिहासिक नगर भी है।

बेजल उत्तर पश्चिमी कोने पर बसा हुआ है और व्यापार की दृष्टि से राइन नदी का सबसे प्रमुख बन्दरगाह तथा व्यापारिक केन्द्र है। अन्तर्राष्ट्रीय लेन देन के कारोबार में यह अपना एक विशिष्ट स्थान रखता है। स्विट्जरलैण्ड के रासायनिक उत्पादों के क्षेत्र में यह सबसे बड़ा केन्द्र है। विश्व प्रसिद्ध औषधि निर्माता सीबा (CIBA) कंपनी का कारखाना यहाँ है। बेजल में ही समार की प्रसिद्ध आयात निर्यात कम्पनियों के कार्यालय हैं। यहाँ प्रति वर्ष अप्रैल में एक औद्योगिक प्रदर्शनी आयोजित की जाती है जिसमें संसार के विभिन्न देशों से लाखों ग्राहक पहुँचते हैं।

ज्यूरिख यहाँ का सबसे बड़ा शहर है। इसकी आबादी लगभग चार लाख है। इसकी गणना विश्व के सबसे सुन्दर नगरों में की जाती है। यह संसार भर में घड़ियों और मशीनों के निर्माण का एक प्रमुख केन्द्र माना जाता है। सभी कल-कारखाने प्रायः बिजली से चलाये जाते हैं। इसलिये ज्यूरिख के आसपास कल-कारखानों की भरमार होते हुए भी गर्द और धुएँ का नाम नहीं। उनकी बनावट भी स्कूलों और कालिजों जैसी है।

इस शहर की एक विशेषता यह है कि अन्य शहरों की भांति यहाँ लोग रात में काफी देर तक क्लबों और रेस्टरां में नहीं रहते। सारा वातावरण बारह बजे रात तक शान्त हो जाता है।

इसके आसपास प्राकृतिक दृश्यों का भी पर्याप्त आकर्षण है। पहाड़ियाँ झील और वन बरबस ही आकर्षित कर लेते हैं। ज्यूरिख या भी झील के किनारे बसा है और फिर शहर के बीचोबीच लिम्मत नदी की धारा इसकी छटा और भी कई गुना बढ़ा देती है। विश्व प्रसिद्ध होटल दोलदेयर यहीं पर है।

छोटे कस्बों में मान्ट्रो, लोभे, ल्यूजर्न, न्यूसटेल इत्यादि बड़े ही सुन्दर हैं। ल्यूजर्न और न्यूसटेल विद्या के केन्द्र भी हैं जहाँ विदेशों से हजारों छात्र विद्याध्ययन के लिए आते रहते हैं।

सबसे ऊँची ट्रेन : सबसे लम्बी सुरंग

मैं स्विटज़रलैण्ड में जहाँ कहीं भी गया, सभी स्थान सुन्दर, स्वच्छ और आकर्षक लगे। स्विस लोगों ने अपने देश में जहाँ कहीं भी सुरम्य स्थल पाया है, उसकी शोभा को बढ़ाया है, उसे सजाया है, सँवारा है। उन्नत विज्ञान के दम्भ में अपनी जरूरत पूरी करने के खयाल से प्रकृति के आशियाने को वैज्ञानिक हथियारों से उजाड़ा नहीं है, बल्कि विज्ञान के सहारे रम्य स्थलियों को पर्यटकों के लिए सुगम, सुविधापूर्ण और सुरक्षित बना दिया है। वैसे तो हमारे देश में भी प्रकृति की रंगस्थलियों की कमी नहीं और न नैसर्गिक शोभा का अभाव है, पर दुर्भाग्य ही कहा जायगा कि हमने उसे सँवारने की कोशिश नहीं की और आज स्वाधीन होने पर भी उस दिशा में हमारा ध्यान अपेक्षाकृत कम ही गया है।

स्विट्जरलैण्ड में दुर्गम और ऊँची-ऊँची पहाड़ियों की चोटियों पर तार की मजबूत रस्सियों के सहारे झूलते हुए कहीं मैंने किसी पर्वतीय नदी को उषा की तरह धरती पर उतरते हुए देखा। कहीं देखा पहाड़ी नदी हजारों फुट नीचे पवन की घनी वनानी के बीच छुप-छिपकर मुस्कान बिखेरती भाग रही है। इन मौकों पर कई बार मन में यह बात आयी कि स्वदेश लौटकर प्रकृति की उजाड़न की दिशा में यदि कुछ भी रोक-थाम कर सका तो अपने को धन्य समझूँगा।

इन्टरलाकन के पहाड़ों के पास एक सुन्दर झरने के किनारे बैठा मैं नाश्ता कर रहा था कि मुझे अपनी बद्रीनाथ की यात्रा का स्मरण हो आया। वहाँ भी हनुमान चट्टी के आगे चढ़ाई करते झरने के किनारे सुस्ताकर कुछ चना-चबेना करने का विचार किया था। परन्तु जैसे ही दुर्गन्ध मालूम पड़ी और चारों तरफ जो दृश्य देखा उससे भूख का भाग जाना तो स्वाभाविक ही था, परन्तु मन में भी कम ग्लानि न हुई। उस समय भी कुछ तीर्थ-यात्री झरने के किनारे मल विसर्जन कर रहे थे। गेरुआ वस्त्रधारी इन बाबा लोगों को रोका तो वे झगड़ा करने को तैयार हो गये और दूसरे भक्तों ने भी मुझे ही बुरा भला कहा। ऋषि-मुनियों के देश में उनसे तर्क करना उचित न समझकर चुप हो गया।

परन्तु स्विट्जरलैण्ड की तो विशालता ही यह है कि प्रत्येक स्थान की शोभा निराली है। इनकी दृष्टि में झरना एक [illegible] है और वहाँ के लोगों में

स्वच्छता का तो इतना अधिक ध्यान है कि अगर कहीं कूड़े का टब नहीं है तो छिलके वगैरह अपनी जेब में डाल लेंगे परन्तु स्थान को गन्दा करने का विचार भी नहीं ला सकेंगे। यदि थोड़े में कहा जाय तो यह सारा देश ही सर्वांगसुन्दर है। फिर भी सारा देश देख लेने पर युंगफ्राऊ ने मुझे सर्वाधिक प्रभावित किया और आज भी वे दृश्य मानसपटल पर ज्यों के त्यों अंकित हैं।

युंगफ्राऊ का अर्थ है नवयुवती। इसके सौन्दर्य की चर्चा स्विटजरलैण्ड में प्रत्येक मित्र-परिचित की जबानी सुनने में आयी थी। स्वतः ही युंगफ्राऊ की ओर खिंचना हुआ इन्टरलाकेन जा पहुँचा। इन्टरलाकेन एक छोटा सा कस्बा है। थ्रायज और थून नाम की दो झीलों के बीच बसा होने के कारण इस इन्टरलाकेन—दो झीलों की भूमि—कहते हैं। इन झीलों के चारों ओर के पहाड़ झीलों के जलरूपी दर्पण में अपनी शोभा देखकर झूमते से लगते हैं। कभी-कभी ऐसा लगता है कि बादल भी अपने को पास से देखने के लिए झीलों की सतह पर झुकते आ रहे हैं।

वहाँ की आबादी साधारणतः अधिक नहीं है। करीब दो ढाई हजार होगी। परन्तु गर्मियों में जब पहाड़ों पर बरफ गलने लगती है और शीत का प्रकोप अपेक्षाकृत कम हो जाता है उस समय यहाँ पर्यटकों का अच्छा खासा जमाव हो जाता है। पर्वतारोहण और अन्यान्य खेल-कूदों के सारे सामान यहाँ के होटलों और दूकानों में मिल जाते हैं। यात्री अनुभवी और कुशल पथप्रदर्शकों (गाइड्स) को अपने साथ ले लेते हैं और निकल पड़ते हैं पहाड़ों की चोटियों पर चढ़ने के लिए। यहाँ एक बात कहूँ कि स्विटजरलैण्ड के गाइड और दूकानदार यात्रियों को दुहने के फेर में नहीं रहते। वाजिब मेहनताना और उचित मूल्य से अधिक नहीं माँगते। साथ ही शिष्टाचार और स्नेह का भाव भी बरतते हैं। इसलिए यहाँ खर्च करके दिल में अफसोस नहीं होता।

इस तरफ जर्मन भाषा बोली जाती है। चेष्टा करने पर भी जब दूकानदारों को समझाने में सफल नहीं होता था तो उनके सामने रुपये रख देता और उनमें से वे अपना उचित मूल्य [redacted] लेते। कभी भी मुझे ऐसा प्रतीत नहीं हुआ कि मैं थोड़ा-बहुत भी ठगा गया हूँ। दूकानों में प्राय बिक्री करनेवाली सुन्दर और स्वस्थ युवतियाँ ही होती हैं जो माल दिखाने के साथ साथ मधुर मुस्कान भी बिखेरती रहती हैं। एक बार कई वस्तुएं देखने पर भी मैंने एक दूकान में कुछ भी नहीं खरीदा तो भी वहाँ की सेल्स गर्ल फाटक तक पहुँचाने के लिए आयी और 'थैंक यू सर' कहकर ही वापिस गई। मुझे बरबस ही कलकत्ते की एक घटना का स्मरण हो आया। एक दूकानदार के यहाँ फाउंटेन पेन खरीदने के लिए गया। दो-तीन

मिनट तक तो उनकी बात ही नहीं की फिर जब मैं इनपर भी सुबह करने को सोच ही रहा था कि उसने मुझे इस तरह घूरना शुरू किया मानो मैं उन्हें उठाकर भागने वाला हूँ। मैंने उससे कहा, मुझे बाहरका यह स्थान बतलाइए, तो उसने अंग्रेजी मे कहा, 'माफ़ीजाय! मैं आपकी मिचामिचा टाइम यस्ट कारचेन प्रामि जानि आपनाके सिर्दूई विनार नाई।' कितना बड़ा अन्तर है हममें और उनमें ?

पश्चिम के लोगों में मैंने एक विशेषता पायी कि उनके मन-मूड मनोरंजन में साहस और जीवन की मुस्कान रहती है। यहाँ के प्रत्येक मजल, स्वस्थ और नागरिक जिस ढंग से अपने अवकाश का उपयोग करते हैं वैसा साधारणतया हममें नहीं पाया जाता।

मार्च महीने का अन्त हो रहा था जाड़ा सिमट रहा था। पर अब भी उसने अपना कम नहीं छोड़ा था फिर भी इन्तरलाकेन में लोगों का जमाव शुरू हो गया था। क्लब और होटलों में चहल-पहल बढ़ रही थी। नृत्यशाला और रेस्टराँ में जीवन खिलखिलाने लगा था। लोग हँसकर, नाचकर अवसर और अवकाश का आनन्द ले रहे थे। किसी की तैयारी थी 'स्केटिंग' की, किसी की 'स्की' करने की तो किसी की दुर्गम पहाड़ियों पर रस्सियों के सहारे चढ़ने की—उनके शिखर छूने की।

'स्की' भी क्या जीवट का खेल है पैरों के तलवे में सामने की ओर उठी हुई लकड़ी की दो चिकनी पटरियाँ बाँधकर बर्फ पर फिसलना। मैंने भी प्रिन्स अली खाँ की दया-ऐसी पाँच सवारों में अपना नाम लिखाया पर बिलकुल निकम्मा साबित हुआ। जब कभी दस बीस फुट चलता कि या तो आसमान देखता या जमीन सूँघता। कई बार कोशिश की सब बेकार। लिहाजा स्की को दण्डवत की और स्की करनेवालों को देखकर ही दिल का हौसला पूरा किया। हजारों फुट की ऊँचाई से बरफ पर स्की की पटरियाँ बाँधे बिजली की सी तेजी से घूमना फिसलना देखकर दाँतों तले उँगली दबानी पड़ती है। स्विट्जरलैण्ड का तो यह राष्ट्रीय खेल है। विदेशों से प्रतिवर्ष सैकड़ों खिलाड़ी अपना करतब दिखाने यहाँ आते हैं। वास्तव में स्की में अभ्यास के साथ बल चाहिए और चाहिए एकाग्रता। उत्साह और बल मेरे पास था साथ ही कुशल गाइड भी। पर करता क्या ? स्की के सामने में मेरा बल बल खो गया क्योंकि अली खाँ की तरह पैर तुड़ाना उचित नहीं जँचा।

इन्तरलाकेन और उसके आस-पास खूब घूमा। दृश्य बड़े ही सुन्दर थे।

इन्हे देखकर मुझ जैसे साधारण मनुष्य का हृदय जब अनुप्राणित हो गया तो पश्चिम के बड़े-बड़े कलाकार और साहित्यकार क्या न भाव विभोर हो उठते होंगे ? प्रसिद्ध साहित्यकार गेटे शैली, कीट्स, वैग्नर, रस्किन लागफेलो और मार्कट्वाइन आदि की कृतियों में इन्टरलाकन के मनोरम दृश्यों की नैसर्गिक छाया स्पष्ट परिलक्षित होती है। यहाँ पर अंगरेजी के प्रसिद्ध भावुक कवि बायरन ने विश्व प्रसिद्ध ग्रन्थ "मनफ्रेड ये जनरल" लिखा था।

परन्तु इन्टरलाकेन मुझे रोक न सका। वह युगफ्राऊ भुलाई न जा सकी। प्रात सनूम था और मन चंचल। बढ़ चला युगफ्राऊ की ओर।

यह यात्रा बड़ी ही मनोरंजक रही। साथ में कई पर्यटक थे अधिकांश विदेशी। यूरोप में इंग्लैण्ड को छोड़कर साधारणतया यात्रा नीरस नहीं होती। विदेशियों से, विशेषकर हम भारतवासियों से, तो लोग जान-पहचान कर ही लेते हैं। ट्रेन में बैठा हुआ बाहर के दृश्य देख रहा था। पास में ही यूरोपियन युगफ्राऊ बैठी थी। वे आपस में अपनी भाषा में बातचीत कर रही थी। कभी-कभी नजर बचाकर मेरी ओर देखती भी जाती थी। लगता था, वे मेरे ही बारे में चर्चा कर रही हैं। मेरे कान में आवाज आई "गांधी और इण्डिया।" मैंने उनकी ओर मुड़कर देखा। उनमें एक तो अंगरेजी में पूछ ही बैठी, क्षमा कीजिए आप भारतीय हैं ?

"हाँ, आपका अनुमान सही है," मैंने कहा।

देखिए न, मेरी बहन कहती थी कि आप भारतीय हो ही नहीं सकते।

भारतीय इतने तगड़े नहीं होते।

मुझे हँसी आ गई। मैंने कहा मोटे-दुबले लम्बे और नाटे मनुष्य तो हर देश में होते हैं। वे भी हँस पड़ी।

परिचय के सिलसिले में पता चला कि वे सुसपन्न परिवार की हैं और छुट्टियाँ मनाने निकली हैं। विचार विनिमय का तांता लगा। गांधी-नेहरू-रवीन्द्र से लेकर हमारी सांस्कृतिक सामाजिक व्यवस्था तक पर बातें हुई। स्त्रियों के अधिकार विवाह और भारत की बढ़ती हुई जनसंख्या आदि पर भी चर्चा हुई। जिस स्पष्ट रूप से इनसे विविध पहलुओं पर खुलकर बातें हुई वह हमारे देश में संभव नहीं। मुझे तो शुरू में कुछ झिझक सी लगी। यह स्वाभाविक भी था क्योंकि महिलाओं से इन सब विषयों पर विचार विनिमय करने का कभी मौका ही नहीं आया था। परन्तु यूरोप की इन बहिनों के उन्मुक्त हृदय ने मेरे मन की झिझक मिटा दी। इस घटना पर ध्यान जाते ही यह विचार उठता है

कि हम यहाँ वस्तुस्थिति पर आवरण डालकर जिसे पर्दा कहते हैं उसे पश्चिम में व्यर्थ का आडम्बर माना जाता है। बहुत अंशों में यह सही भी है क्योंकि हमारी वर्तमान संस्कृति में शिष्टाचार के नाम पर दकियानूसीपन का समावेश हो गया है और भ्रष्ट आचार बरतते हुए भी दिखाव का प्रश्रय दिया जाता है। किन्तु वहाँ सभी उन्मुक्त हैं। इसलिए हृदय के स्वच्छ और स्वस्थ रहने का सुयोग भी अधिक है।

बिजली से संचालित हमारी ट्रेन अपनी यात्रा के आरंभ से ही क्रमशः पहाड़ की उंचाई पर बढ़ती जा रही थी। स्विट्जरलैण्ड में सभी ट्रेनें बिजली से चलती हैं। किन्तु यह यात्रा तो सर्वथा भिन्न थी क्योंकि पहाड़ की ढलान को काट छाटकर यंगफ्राऊ की चोटी पर चढ़ने के लिए मार्ग नहीं बनाया गया है जैसा कि हमारे देश में दार्जिलिंग और शिमला की पहाड़ियों पर है। यहाँ स्विस इंजीनियर और वैज्ञानिकों ने पहाड़ के भीतर ही सुरंग काट दी हैं जिनमें से यह ट्रेन गुजरती हुई यंगफ्राऊ की चोटी पर चढ़ती चली जाती है। यात्रियों को मालूम तक नहीं होता कि प्रतिपल वे समतल भूमि से कितने ऊपर उठते जा रहे हैं। बीच-बीच में कई जगह पर यह ट्रेन कुछ देर के लिए रुकती है जहाँ पहाड़ काटकर बाहर का दृश्य देखने की जगह बनाई गई है। यहाँ यात्री उतरकर बाहरी दृश्य देखते हैं—पहाड़ की ऊंचाई से गिरते, शोर मचाते झरने इठलाती हुई पहाड़ी नदियाँ और रजत शुभ्र बर्फ पर तैरते हुए बादल।

वनजन में हमारी ट्रेन कुछ देर रुकी। सुना था कि यहाँ से सूर्यास्त का दृश्य बड़ा ही अनुपम दीखता है। सूर्योदय तो मैंने दार्जिलिंग के टाइगर हिल में देखा था। वापस लौटते समय जब मैं वनजेन पहुँचा तो सूर्यास्त का समय था। अवसर हाथ से जाने देना नहीं चाहता था। बाहर की ओर आकर देखा सूर्य पश्चिम की पहाड़ियों के पीछे जा रहा है और हिमानी शिखर और पर्वत की घाटियों पर सध्या केसरिया रंग बिखेर कर दिवाकर का विदाई का अभिनन्दन कर रही है।

वनजन से फिर हमारी ट्रेन नागिन की तरह सुरंगों में समा गई। ट्रेन के प्रकाश में केवल शिलाएं और गुफाएं और पहाड़ की चट्टानों के अलावा कुछ नहीं सूझता था। कुछ देर में हम शीडेग पहुँचे। यहीं से यंगफ्राऊ के लिए ट्रेन बदलनी पड़ती है और यहीं से यंगफ्राऊ की खास यात्रा शुरू होती है। ट्रेन फिर पर्वत के गर्भ में समा गई और चक्कर लगाती हुई आइजमीयर पहुँची। १०३६८ फुट की उँचाई पर यह स्थान पर्वत की ठोस चट्टानों को काटकर बनाया गया

है और स्विस यांत्रिक कुशलता का उत्तम नमूना प्रस्तुत करता है। आइजमीयर (हिमसागर) जैसा नाम है वैसा ही उसे पाया। गर्म कपड़े पहिने था फिर भी ठंड महसूस होने लगी। अब हमारी यात्रा का अंतिम चरण प्रारंभ हुआ।

आखिर युंगफ्राऊ तक ट्रेन ने हमें पहुँचा ही दिया। यह संसार का सबसे ऊँचा रेलवे स्टेशन है और यहीं पर मैंने यूरोप के सबसे ऊँचे होटल बर्गहाऊस में नाश्ता किया। यात्रियों के लिए सारी सुविधाएं यहां थीं और स्की से हाथ पैर टूट जाने पर प्राथमिक चिकित्सा की भी व्यवस्था थी। गर्म और आरामदेह रहने की जगह और भोजन की सुव्यवस्था देखकर चित्त प्रसन्न हो गया।

यहां से निपट के सहारे युंगफ्राऊ की ओर ऊँचाई पर जा पहुंचा जहां एक बड़ी दूरबीन लगी हुई है और जिससे समीपवर्ती देश देखे जा सकते हैं। बचपन में पढ़ी हुई परियों की कहानियों जैसी विचित्रता यहां देखने में आई। इस जगह बरफ का एक मकान है जिसमें बरफ की टेबुल बरफ की कुर्सियाँ और बरफ का ही सोफा है। पचास पचपन वर्षों से बना हुआ यह मकान और इसकी वस्तुएं आज भी उसी तरह कायम है क्योंकि इस जगह सर्दी इतनी अधिक है जिसकी वजह से बरफ गलने नहीं पाता। युंगफ्राऊ की ऊँचाई १२००० फुट है हिमालय की चोटियों से कहीं कम। फिर भी इसकी अपनी विशेषता है अपना आकर्षण है। इसके पास में पहुँचना उतना कठिन नहीं। विज्ञान और कौशल ने सब सुगम कर दिया है। प्रकृति के विविध रंग रूपों की उन्मत्त छवि का आनन्द यहां जिस सरलता से लिया जा सकता है वह अन्यत्र कहीं भी संभव नहीं। यह जानकर और भी ताज्जुब हुआ कि ऐसी जगह और इतनी संकटापन्न ऊंचाई पर से भी लोग स्की करते हैं। जरा भी चूके कि प्राण गये। जैसे हालैण्डवाले समुद्र को थपा-थपा जान गये हैं उसी तरह स्विस लोग अपने पहाड़ों को। वे साहस और उत्साह की सीमा नहीं मानते। यहां तक पहुंचना दुर्गम और दुरूह रहा होगा, किन्तु स्विस यांत्रिक क्षमता ने युंगफ्राऊ के सौन्दर्य का रहस्य दुनिया के सामने प्रकट कर दिया है।

युंगफ्राऊ के शिखर पर जब मैं पहुंचा तो दोपहर था। सूर्य के प्रकाश से बरफ चांदी सी चमक रही थी। चारों ओर कुहासा था। वातावरण की शांति में स्विट्जरलैण्ड की सारी यात्रा चलचित्र की तरह मानस में एक के बाद एक उतरने लगी। सोचा आखिर यह भी मर्त्यलोक का देश है! अभाव और आवश्यकता यहां भी रही होगी। फिर क्या नहीं यहां दैन्य हैं? देखा, मेरा स्विस गाइड मुझे देखकर मुस्करा रहा है। मैंने अनुभव किया कि श्रम का सही अर्थ

समभन पर मनुष्य देवत्व पा सकता है। गाइड ने पूछा, सर्दी अधिक तो नहीं लग रही है ? नीचे उतरोगे ? मैंने उत्तर दिया— देवदूत ! स्वर्ग से नीचे जाने को क्यों कहते हो ? और हम दोनों हँस पड़े।

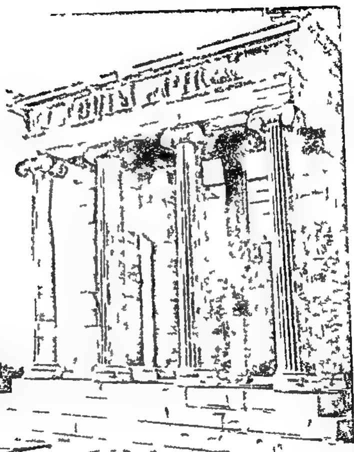
छोटे से देश स्विटजरलैंड के कुशल यांत्रिकों ने जिस तरह से विश्व की सबसे ऊंची ट्रेन बनाई, उसी तरह यूरोप के हिमालय 'आल्प्स' के पेट को चीरकर भूतल की सबसे लम्बी सुरंग बनाने का सुयश भी उन्हें ही प्राप्त हुआ।

वैसे तो १८७० में उन्होंने माट सेनिस नामक की आठ मील लम्बी सुरंग बना ली थी परन्तु सिम्पलन सुरंग का तो अपना अलग ही महत्त्व है। विश्व विजयी वीर नेपोलियन को आल्प्स के ऊपर से अपनी फौज ले जाने में हजारों मनुष्यों और अपरिमित युद्ध-सामग्री से हाथ धोना पड़ा था किन्तु उसी आल्प्स को मुट्ठी भर लोगों ने काबू में कर लिया। आज हम जेनेवा में आराम से ट्रेन में सो कर सुबह इटली के मिलान नगर में पहुंच जाते हैं। हमें पता भी नहीं चलता कि सारे आल्प्स के धौल शिखरों को हम पीछे छोड़ आये हैं।

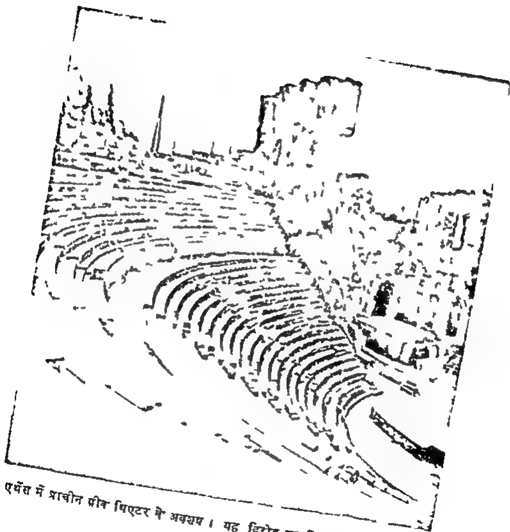
यह सुरंग १८९८ में शुरू होकर १९०८ में समाप्त हुई थी। एक हजार मजदूरों ने रात दिन तीन पाली से काम कर ६॥ वर्षों में इस कठिन काम को पूरा किया। १२। मील लम्बी इस सुरंग को कहीं-कहीं तो ७ हजार फुट की ऊंचाई का बोझ सहन करना पड़ता है।

अधिक चौड़ी सुरंग बनाने से ऊपर के दबाव के बोझ से पहाड़ खिसकने का भय था इसलिए ५६ फुट की दूरी पर दो समानान्तर सुरंग बनाई गई है और हर ६०० फुट के बाद दोनों में आवागमन का मार्ग बना दिया गया है। इस तरकीब से काम तो शीघ्र समाप्त हुआ ही हवा के प्रवेश में भी सुविधा रही।

जब २॥ मील सुरंग बन गई तो अकस्मात् प्रबल वेग से ठंडे बर्फीले जल की धारा निकल आई जिसका बहाव १०॥ हजार गैलन प्रति मिनट था और ६०० पौंड प्रति इंच का दबाव था। इस आकस्मिक बाधा और विपत्ति से वे लोग घबड़ा तो गये परन्तु फिर भी उन्होंने साहस के साथ काम को अविराम गति से चालू रक्खा। परमात्मा ने भी इन वीरों की मदद की। कुछ ही आगे जाकर एक गर्म पानी की धारा मिल गई। इन दोनों के सम्मिलन से तापमान सन्तुलित हो गया और सिम्पलन सुरङ्ग बनकर तैयार हो गई जिसे देखने दुनिया के हर कोने से लाखों पर्यटक आते रहते हैं और वे मनुष्य की इस कर्तृत्व शक्ति को देखकर गद्गद हो जाते हैं।



एथेंस नगर में एथना देवी का मंदिर—एक्रोपोलिस जो ईसा पूर्व पाँचवी शती के अंतिम वर्षों में बनाया गया था।



एथेंस में प्राचीन ग्रीक थिएटर के अवशेष। यह हिरोड का थिएटर कहलाता था।

सुकरात और सिकन्दर के देश में

रोम से वायुयान द्वारा एथेंस आ रहा था पाश्चात्य सभ्यता के दूसरे मूल स्रोत यूनान की राजधानी एथेंस। जहाज जब यूनान की भूमि पर मँडराया तो ऊबड़ खाबड़, बंजर पर्वतीय भूमि देखकर राजस्थान के चित्तौड़ क्षेत्र की याद आ गई। मन में प्रश्न उठा क्या इस प्रकार की शुष्क भूमि में ही ऐसे वीर उत्पन्न होते हैं जिनकी गौरव गाथा वर्णन करके होमर और चन्द वरदाई अमर हो गए?

रोम और स्विट्जरलैण्ड में मित्रों ने कहा था कि आप विश्व के सुन्दरतम स्थानों को देखने के बाद यूनान जैसे नीरस और निर्जन देश में क्या जा रहे हैं? परन्तु प्राचीन सभ्यता के अवशेषों विश्वविख्यात आर्कोपोलिस पर्वत और देवी एथीना का मन्दिर देखने के मोह ने विवश कर दिया।

विश्व के इतिहास में भारत एवं मिस्र के समान यूनान का भी एक महत्त्व पूर्ण स्थान है। जिस समय अन्य यूरोपीय देशों के निवासी गुफाओं में रहते, चर्म पहनते थे, उस समय यूनान अपनी सभ्यता के चरमोत्कर्ष पर था। यद्यपि भारत और मिस्र जैसा पुराना इतिहास तो यूनान का नहीं है परन्तु जितनी सामग्री उसके इतिहास के बारे में उपलब्ध है वह इन दोनों देशों की अपेक्षा कहीं अधिक है। यदि किसी को केवल आमोद प्रमोद के लिए रात्रि क्लब और बड़े-बड़े होटल और आराम के साधन ही चाहिए, तो यह उपयुक्त स्थान नहीं किन्तु जो मानव की सतत विकासोन्मुख प्रवृत्तियों का अध्ययन करने के अभिलाषी हों उन्हें यूनान अवश्य जाना चाहिए।

भारत से लन्दन जाने वाले यात्रियों को यूनान जाने के लिए कोई अतिरिक्त व्यय नहीं करना पड़ता। कुछ हवाई कम्पनियों के जहाज एथेंस में भी उतरते हैं। वे यात्रियों को इस बात की सुविधा देते हैं कि वे कुछ दिन वहाँ बिता सकें।

एथेंस को यूनान की दिल्ली कहना उपयुक्त होगा। यूनान के इतिहास में इस नगर का वैसा ही स्थान है, जैसा भारत के इतिहास में दिल्ली का। ईजियन समुद्र के किनारे बारह लाख की जनसंख्या का यह नगर राजधानी होने के साथ साथ एक बड़ा बन्दरगाह और व्यापार केन्द्र भी है।

आज यहाँ भी जो रहा है उसका शासन भी अफ़गान है। ईरानियों के समय में यहाँ स्त्रियों की तरह बन-बन भटक भारत गौरव का पता मिलता। परन्तु सिकन्दर के आक्रमण-काल और उसके बाद की घटनाओं से भारतीयता का कथा ग्रन्थ भर गया है।

मैं नाश्ता करके पैदल घूमने निकल गया। सड़क यहाँ आतिथ्य के सहारे गयी जो दाहरू से पानी दूर कर रही है। इस नगर के चारों ओर उजाड़-आगार दिखे हैं। यहाँ पर अफ़गानिस्तान, गुजरात की सड़क का प्याला पिलाया गया था। यहाँ से बाद सिकन्दर ने अपनी विश्व विजय का अभियान आरम्भ किया था। जिस समय सिकन्दर की बार जननी अपने पुत्र को विश्वविजय के लिए जाते, गीतिका के साथ आँखों भरी विदाई दे रही थी उस समय वह निर्मोही पर मन ही मन गाते गाते कैसे रहा होगा कि यह विदाई अन्तिम ही है।

उस बात को आज ढाई हज़ार वर्ष व्यतीत हो चुके हैं। अन्य देशों की तरह यहाँ में भी परिवर्तन का चक्र निरन्तर चला। कभी तो यहाँ के बार भारत देश से गुप्त की सामग्री और नाग-नागिया के नवीन विजयी होकर आए और कभी इसी समय भी आया कि शासन और तुर्की सत्ता के आक्रमण से इस स्थान को नरक भोग जाना पड़ा।

वैसे तो आबालानिस स्थान पर कई इमारतों के खण्डहर दर्शनीय होते हैं परन्तु सर्वप्रथम मैं पार्थेनान के खण्डहरों में संगमरमर के बने देवी एथीना के मन्दिर में गया। विश्व की सुन्दर कृतियों में इस मन्दिर का अनुपम स्थान है। आज यहाँ चारों तरफ बिखरे हुए संगमरमर के पत्थरों और खण्डित मूर्तियों के सिवाय और कुछ दृष्टिगोचर नहीं होता परन्तु २००० वर्ष पहले एक ऐसा भी समय था जब इसी मन्दिर के प्रांगण में बैठकर सम्राट अपने सरदारों के साथ विश्व विजय की रूपरेखा बनाया करते थे और विजय अभियान के पूर्व देवी एथीना से वरदान माँगते थे।

एक कोने में वक्ष के एक पत्थर पर बैठे हुए मैंने सोचा—मनुष्य कितना विस्मरणशील है। शायद इस वक्ष में ही कोई ऐसा दुर्दान्त प्रतापी सरदार सोया होगा जिसने किसी समय अपनी तलवार से हज़ारों बच्चों और स्त्रियों को अनाथ कर दिया होगा और आज उसके अवशेष कुछ मिट्टी के कणों में बदल गए हैं। उस समय मुझे कवि की यह उक्ति याद आ गयी —

> कितनों नृपवर अद्भुत से इस धाम आए हैं कितने सम्राट
> एक द्वार से घुस, घड़ी भर ठहर, दूसरे से पार।

जहाँ शाह जमशेद विभव था, वहीं जहाँ मदिरा लहरी
बने आज उन राजगृहों के सिंह शृगालादिक प्रहरी।

करते थे जो यहाँ वहाँ की व्याख्या रात रात भर जाग,
सब धज्जियाँ गए ग्रंत में, भूल गया सब राग विराग।
कहाँ गई उनकी वह वाणी, किए गए सबके मुँह बन्द
भर दी गई धूल उनमें या धर दी गई धधकती आग।

करीब तीन हजार वर्ष पूर्व एथेंस का नाम केक्रापिया था। यहाँ के एक वीर सरदार एथन्स ने देवी एथेंस के नाम पर नगर का यह नाम रखा था। उसके बाद की कुछ शताब्दियों में तो इसी जगह में यूनानी साम्राज्य का शासन सचालित होता रहा।

ईसा पूर्व पाँचवीं शताब्दी में ग्रीस में परीक्लीज नाम का एक महापुरुष हुआ जिसकी वक्तृत्व शक्ति और कार्य-कौशल से ही आर्कोपोलिस की इमारत बनी। इसे बनाने में मिस्र के पिरामिडों की तरह गुलामों से जबरन मेहनत नहीं कराई गई थी। ग्रीसवासियों ने स्वेच्छा से श्रमदान द्वारा लगातार चौदह वर्ष में इसे पूरा किया था। ऐसा कहा जाता है कि उस समय ऐसी इमारत विश्व के किसी भी देश में नहीं थी। अंग्रेजी में एक कहावत भी है कि दुनिया में आकर यदि एथेंस नहीं देखा तो जीवन वृथा है।

प्रथम ईस्वी शताब्दी में रोमनों ने यूनान को विजित कर लिया और एथीना के मन्दिर में माता मरियम की मूर्ति स्थापित कर दी गई। इसके बाद पन्द्रहवीं शताब्दी में तुर्कों ने एथेंस पर कब्जा कर लिया और एथीना का मन्दिर माता मरियम का गिरजा कुछ शताब्दियों के लिए मस्जिद के रूप में परिणत हो गया। चार सौ वर्षों के तुर्की शासन-काल में यूनान को जो सांस्कृतिक और जन-हानि उठानी पड़ी वह कभी पूरी न हो सकी।

आर्कोपोलिस के खण्डहर देखते देखते मध्याह्न हो गया। गर्मी महसूस हो रही थी क्योंकि अन्य यूरोपीय देशों की अपेक्षा यूनान अधिक गर्म देश है। तो भी इन खण्डहरों में कुछ ऐसा आकर्षण था कि वहाँ से वापस आने का जी नहीं करता था। एक बड़े खण्डहर के कक्ष में बैठकर थकावट मिटा रहा था कि तन्द्रा-सी आ गई। हठात् रवि ठाकुर के क्षुधित पाषाण कहानी के नायक की तरह मैं भी दो हजार वर्ष पहले के यूनान में पहुँच गया जहाँ विचित्र वेशभूषा में नाग नाना प्रकार के राग रंग कर रहे थे। थोड़ी देर बाद एक सिल्क

सी महसूस हुई और आँख खुलने पर परियों की जगह विशाल, भयावने खंडहर संगमरमर के खम्भे दिखाई दिये। आखिर जी कड़ा करके पार्थेनान से उतर वास्तविक जगत् में आ गया।

सन्ध्या-समय एथेंस का राष्ट्रीय संग्रहालय देखने गया। २,००० वर्षों के लम्बे व्यवधान को झेलती जितनी यादगारें, मूर्तियाँ और वस्तुएँ इसमें सुरक्षित हैं, उतनी शायद ही अन्यत्र कहीं हों। वैसे तो लन्दन, मास्को, पेरिस और वाशिंगटन के संग्रहालय संसार में बड़े अद्भुत माने जाते हैं, पर एथेंस के संग्रहालय का अपना ही महत्त्व है। इसके सिवाय एथेंस में अन्य प्राचीन दर्शनीय वस्तुओं की भी कमी नहीं। इनमें प्रमुख हैं नायक का मन्दिर, ल्यासिस और एगस के गिज अमिनिस की कब्रगाह, डिनास का थियेटर हाल और स्टेडियम। परन्तु एथेना के मन्दिर और पार्थेनान के खण्डहरों का वर्णन ही यहाँ पर्याप्त होगा।

इस प्राचीन एथेंस के साथ एक नया एथेंस भी है जिसे हम इन्द्रप्रस्थ के मुकाबिले में नई दिल्ली कह सकते हैं। यह नगर आज से १२८ वर्ष पूर्व बसाया गया था। अन्य यूरोपीय नगरों की तरह यहाँ भी विश्वविद्यालय, क्लब, बाजार, दुकानें, सड़कें, पुस्तकालय, सरकारी दफ्तर, सिनेमा, नाट्य-गृह आदि सब कुछ हैं। परन्तु फ्रांस और बेल्जियम से लौटे प्रत्येक पर्यटक के लिए इसमें कुछ आकर्षण नहीं रह जाता। एक बात मुझे अवश्य अनुभव हुई कि यहाँ के निवासियों में पूर्व और पश्चिम का सम्मिश्रण है, इसलिए यूरोप के पश्चिमी देशों की अपेक्षा वे सुन्दर और गोलाकार मुखाकृति वाले हैं। वेशभूषा में भी पश्चिमी यूरोपीय देशों से कुछ अन्तर मालूम देता है। कई जगह लम्बी दाढ़ी वाले, चोगा और लम्बी टोपी पहने पादरी भी दिखाई दिए। इसके सिवाय गलियों और सड़कों पर भी हमारे यहाँ की तरह मिठाइयों और अन्य वस्तुएँ बेचनेवालों के खोमचे दिखलाई पड़ जाते हैं। कुछ बाजार तो भारत के बाजारों की याद दिलाते हैं।

यूनान बहुत बड़ा देश नहीं है। इसका क्षेत्रफल ५० हजार वर्गमील और आबादी करीब ७५ लाख है। न तो यहाँ बड़े-बड़े कारखाने हैं, और न यहाँ खनिज सम्पत्ति ही अधिक है। इसलिए अमरिका व यूरोप के सम्पन्न देशों की तरह यह देश धनी नहीं है। तो भी इसकी अपनी सभ्यता है, अपना इतिहास है। आज भी जब कोई विदेशी यूनानियों से बातें करता है तो उसे उनके गौरवपूर्ण अतीत की झलक मिलती है।

१९४० के अन्त में जर्मनी और इटालियनों ने इस देश पर अधिकार कर

लिया था जो तीन वर्षों तक कायम रहा । इस अवधि में इसे बहुत हानि उठानी पड़ी । १९४४ में मित्रराष्ट्रों की सहायता से वह फिर स्वतंत्र हुआ और वहाँ के लोग इन बारह तेरह वर्षों में अपने देश को आगे बढ़ाने में कुछ आगे तक सफल भी हुए हैं।

१९५० में एक भारतीय रुपये के बदले में वहाँ के तीन सौ ड्राक मिलते थे। इससे वहाँ की गिरी हुई आर्थिक हालत का पता चलता है । इन दिनों सरकार ने अपने सिक्के की कीमत सौ गुनी कम करके आर्थिक असन्तुलन मिटाने की चेष्टा की है।

एथेंस और ग्लाईफोपोलिस के अतिरिक्त और भी बहुत से स्थान देखने योग्य हैं जैसे क्रीट और स्पार्टा । परन्तु मेरे पास समय कम था और स्वदेश लौटने की जल्दी थी इसलिए उन्हें देख न सका और वायुयान से काहिरा आ गया।

यद्यपि थोड़े समय तक ही ठहर सका परन्तु जो भी देखा उसकी स्मृति जीवन भर बनी रहेगी । यहाँ की एक घटना आज भी हृदय पर अंकित है। उसका उल्लेख कर यह लेख समाप्त करूँगा ।

एथेंस प्रवास के समय टी० डब्लू० ए० (एक अमरीकी वायुयान कम्पनी) के युवक अफसर श्री कार्नोपालिस से मेरा मित्रता हो गई थी । उन्होंने मुझसे कहा कि वे एक बार मुझे अपनी पत्नी से मिलाना चाहते हैं । चार महीने पहिले उनका ढाई वर्ष का इकलौता बच्चा काल कवलित हो गया था । उस दिन के बाद से प्रत्येक दिन उनकी स्त्री तीन चार घण्टे उसकी कब्र पर बैठकर रोती रहती और कुछ विक्षिप्त सी भी हो गई थी। मैंने आपका जिक्र किया था। वह आप से एक बार मिलना चाहती है।

दूसरे दिन उनके घर जाकर थोड़ा नाश्ता किया और उनकी पत्नी से मिला । वह उस समय भी शोक चिह्न धारण किए हुए थी और बहुत ही उदास मालूम देती थी । उसने मुझसे कहा— भारत की ज्योतिष विद्या के बारे में मैंने बहुत कुछ सुन रक्खा है। कृपया मेरा हाथ देखकर बताएं कि मेरा भविष्य क्या है।

यद्यपि मैं ज्योतिष का क-ख-ग भी न जानता था परन्तु उस शोक-सन्तप्त मातृ हृदय को सान्त्वना देने के विचार से मैंने हाथ देखकर कहा कि— दो वर्ष के भीतर ही आपको पुन: पुत्र प्राप्ति होगी।

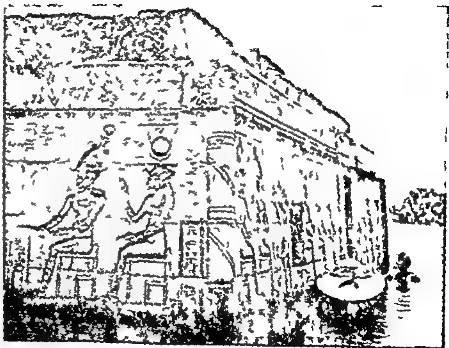
यह सुनकर उसके उदासीन चेहरे पर प्रसन्नता की झलक दिखाई दी। मैंने भी अपनी बात में असत्य के पीछे सत्य के दर्शन पाए।

संयोग की बात है कि दो वर्ष बाद यशपाल को एक दिन उसके पति का पत्र मिला, जिसमें उसने अपना और अपनी स्त्री का आर से बहुत-बहुत कृतज्ञता से लिखा था — *'आपके कथनानुसार हमें पुत्र की प्राप्ति हुई है। हमें बड़ी प्रसन्नता होगी यदि आप एक बार हमारे यहाँ पधारें।'*

यशपाल अगले दिन ही पूना जाकर उस दम्पति से मिल आया।



सक्कारा में सम्राट दुयोसर का ५००० वर्ष पुराना पिरामिड



अस्वान बांध के जल में डूबा हुआ फिले द्वीप अपने गौरवमय स्मारकों के साथ

पिरामिडों के देश में

पश्चिमी यूरोप के बाद यूनान भी देख चुका था। अब देखना था मिस्र—पिरामिडों का देश। ठीक भी यही लगा, क्योंकि इतिहास के अरुणोदय-काल में ही यूनान की भाँति नील की घाटी में भी मानव-सभ्यता की एक धारा प्रवाहित हुई थी जिसे मिस्र की सभ्यता कहते हैं। यूनान, बेबीलोन और सिन्धु घाटी की प्राचीनतम सभ्यताओं की भाँति ही, इसकी महिमा और गरिमा भी उत्तरोत्तर विकसित हुई थी। और, अब इसके अवशेष बताते हैं कि भौतिक उन्नति में भी यह अपनी समकालीन सभ्यताओं से किसी कदर कम न थी।

मिस्र जाना पूर्व निश्चित था। एथेंस में सभी काम निपटाकर हवाई अड्डे पहुँचा। महीना मई का था और मौसम साफ। दो घण्टे बाद ही हमारा विमान अंधकार को चीरता हुआ बढ़ चला मिस्र की राजधानी काहिरा की ओर।

दो घण्टे में यूनान से मिस्र! आज से ३,००० वर्ष पूर्व कितना समय लगता होगा? और अपने विजयोन्माद में चूर आँधी की तेजी से बढ़ता हुआ सिकन्दर भी कितने दिनों में मिस्र तक पहुँच पाया होगा?

ध्यान भंग हुआ। विमान की परिचारिका कह रही थी—काहिरा आ रहा है। हम नीचे उतरेंगे।

विमान ने मिस्र की धरती का स्पर्श किया। उस समय रात के साढ़े बारह बज रहे थे। चुंगी अफसरों के घेरे से बाहर निकला। हमें टी० डब्लू० ए० (टास वर्ल्ड एयरवेज) की बस ने नगर में अपने पूर्व निश्चित स्थान विक्टोरिया होटल पहुँचा दिया।

होटल यूरोपीय ढंग का था, साफ और आरामदेह, किन्तु दिल्ली के 'अशोक' और 'इम्पीरियल' के मुकाबले का नहीं। बिस्तर पर पीठ सीधी करते ही नींद आ गयी।

सुबह उठा। दिन चढ़ आया था। आठ बजे थे। गरमी ने बता दिया कि यह अफ्रीका है और सहारा का रेगिस्तान यहाँ से दूर नहीं। नित्य-कर्म से निपटकर होटल से निकला।

रास्ते और बाजार बहुत-कुछ पुरानी दिल्ली और कलकत्ते की जकरिया स्ट्रीट की तरह। रामन और अरबी लिपि में लिखे साइन बोर्ड। अधिकांश लोग ताम्रवर्ण और दीर्घकाय। उन्हें देखकर लगा कि मिस्र सदियों से अरब और अफ्रीका का संगम स्थल रहा होगा। उनका पहनावा भी अरबों का सा था। लम्बे चोगे, पायजामे और ऊँची लाल टोपी। किसी किसी की टोपी के चारों ओर फेंटा भी बँधा हुआ था। बातचीत के तौर-तरीके भी बहुत-कुछ अपने यहाँ की तरह थे। बुर्कों में औरतें, मस्जिदें और नक्श—वातावरण अपरिचित नहीं लगता था। शायद इसीलिए कि करीब सात सौ वर्षों तक भारत पर भी इस्लाम का प्रभुत्व रहा है। चीजों की सजावट में भी बहुत साम्य था। एक जगह देखा—तरबूज के भुने हुए बीज और नमकीन चने रखे हुए थे। एक बड़े तरबूज की रसदार फाँक भी सजी था। पेट भर चने और बीज खाये, ऊपर से तरबूज, तृप्ति महसूस हुई। याद आया राजस्थान में बाजरे के सिन्ट खाकर मतीरे का पानी पीना।

शहर के मकान विशेष आकर्षक नहीं लगे। वास्तुकला की दृष्टि से ये हमारे यहाँ से अच्छे नहीं। नये मकान यूरोपीय ढंग के थे। मुहम्मद अली की मस्जिद बड़ी तो जरूर है पर दिल्ली की जामा मस्जिद और अजमेर की दरगाह शरीफ की विशालता और शान कुछ और ही है।

गरमी सता रही थी। नहाना चाहता था। सोचा—नील ही में क्यों न नहाऊँ? चल पड़ा। नील थोड़ी ही दूर था। तौलिये में कपड़े लपेटकर किनारे रखे और जाँघिया पहिन नील में उतरा। अब तक देश के बाहर इस प्रकार खुलकर नहाने का अवसर नहीं मिला था। आनन्द आ गया। लगा गंगा में स्नान कर रहा हूँ। तैरने के लिए हाथ चलाये ही थे कि आवाज आई, "अच्छी तरह तैरना तो जानते ही होंगे?"

देखा—पास ही एक बुजुर्ग स्नान कर रहे थे। गहुँआ रंग, स्वस्थ शरीर, हल्की दाढ़ी और महीन मूँछें। मैंने मुस्कराकर कहा, "जी हाँ, तैर लेता हूँ।"

"कैसा लगा हमारा देश?" बड़ी साफ अंगरेजी बोल रहे थे।

मैंने कहा, "अभी कुछ देख नहीं पाया, कल रात ही आया हूँ।"

'हमारा देश' सुनकर मुझे कुछ ताज्जुब हुआ। मैं पूछ ही तो बैठा, "माफ कीजिए, क्या आप मिस्री के हैं?"

उन्होंने हँसकर उत्तर दिया, "जी हाँ, क्या मेरी अंगरेजी की वजह से आप

मुझे वहां और क्या समझ रहे हैं ? फ्रेंच, इतालियन और जर्मन बोलने वाले भी आपको यहाँ मिल जायेंगे।

मैंने कहा, 'मेरी धारणा थी कि मिस्रवासी ताम्रवर्ण के होते हैं, मगर आप...।'

वे कहने लगे, 'आपका अनुमान सही है, पर पूर्ण रूप से नहीं...। हमारे देश का उत्तरी भाग अरब और यूरोप के पास है। इसलिए दक्षिण का रूप ताम्रवर्ण वाला का रंग आपको साफ मिलेगा। इसके अलावा कुछ अरब, तुर्क, यहूदी, यूनानी और इतालियन भूमध्यसागरीय तट पर सैकड़ों वर्षों से बसे हुए हैं। उनकी मिश्रित संतान अपनी सुन्दरता के लिए संसार में बेजोड़ है।'

बातचीत में मजा आ रहा था। मैंने कहा, 'बचपन में पढ़ा था कि मिस्र नील का देन है। इसलिए नील के प्रति आप लोगों के हृदय में बड़ी श्रद्धा है। आज मैंने भी अपनी स्नान की हुई पवित्र नदियों की संख्या एक और बढ़ा ली।'

मिस्री बुजुर्ग ने कहा, 'जनाब, हमारे लिए तो यह आबे हयात है, हमारा सम्पूर्ण देश रेगिस्तान है। पश्चिम में लीबिया से गरम रेत की आंधियाँ आती हैं और पूर्व में अरब का रेगिस्तान है। खुशकिस्मती से बीच में यह अमृत की धारा मौजूद है। यह इथोपिया के पठारों से उपजाऊ मिट्टी लाकर अपने किनारों पर जमा करती जा रही है। इसी में खेती करके हम कुछ अन्न उपजा लेते हैं। हम यहाँ विश्व की सर्वोत्तम रूई पैदा कर उसे अन्य देशों को निर्यात करके अपनी आर्थिक दशा संभाले हुए हैं, वरना न तो हमारे पास अच्छे उद्योग धंधे हैं और न खनिज पदार्थ ही। हमारे यहाँ ८० प्रतिशत लोग नील के किनारे खेती करके जीवन यापन करते हैं। शेष २० प्रतिशत शहरों में रहते हैं। शहर भी इसी के दोनों किनारों पर हैं। मिस्र में नील भी खुदा की तरह एक ही है।' —कहकर वे हंसने लगे।

देर तक नहाने के बाद हम बाहर निकले। उन्होंने कपड़े पहनते हुए कहा, 'चलिए कॉफी पी जाय। सामने ही कहवा घर है। मिस्र में चाय की जगह कॉफी पीने का प्रचलन है।'

कहवा घर हमारे यहाँ के मद्रासी रेस्तरां की तरह था। कमरे की दीवार पर शाह फारुख और मक्का शरीफ के चित्र, कुरान शरीफ की आयतें और कुछ कलेंडर टंगे थे। हम एक छोटी टेबिल के किनारे बैठ गये। मैंने पूछा, 'हल्की मँगाऊं या कड़ी ?' उन्होंने सहज मुस्कान के साथ कहा, 'यह सवाल तो भारत में आप मुझसे कर सकते हैं, यहाँ तो मैं ही आपसे करूँगा।'

काफी बुरा नहा थी। उन्होंने बड़े ही उत्साह से अपने देश के बारे में जानकारी दी। मुझे ऐसा लगा कि वास्तव में मिस्र को रिम से उत्तर तक देखने के लिए कम से कम दस दिन का समय चाहिए। इसी प्रसंग में मैंने कहा आप अगर बुरा न मानें तो एक बात पूछूँ?

शौक से पूछिए।

मैंने शाह फारूक के चित्र की ओर इशारा करते हुए पूछा 'पेरिस में शाह फारूक के बारे में कुछ ऐसी चर्चा सुनी कि दुनिया के हर कोने की सुन्दरियों का एक बड़ा मजमा इनके हरम में है जिस पर करोड़ों रुपये सालाना खर्च किये जाते हैं।* इनकी ऐयाशी और इनके अजीब गरीबो शौकों पर इसी तरह मिस्र की बेशुमार दौलत बरबाद होती है। इसे आपका देश कैसे बर्दाश्त कर रहा है?'

बुजुर्ग महोदय ने संजीदगी से कहा 'नवाब, शाह, राजा और बादशाह—चाहे हिन्दुस्तान या मिस्र—कहीं के भी हों जब तक उनके पास निरंकुश सत्ता रहेगी तो नतीजा साफ है।

इस संक्षिप्त उत्तर से मुझे अपने सवाल का जवाब मिल गया और याद आ गये अपने देश के नवाब और राजाओं के लज्जास्पद विवेकहीन कारनामे। विदा होते समय बुजुर्ग महोदय ने मेरे हाथ अपने हाथों में लेकर सीने से लगाए।

पीछे मुड़कर देखा—छोटी छोटी डोंगियाँ और नाव पाल तान नील की लहरों में तिर रही थीं। लहरें धूप में चमक रही थीं। याद आ गया भारतेन्दु की पंक्ति नव उज्ज्वल जल धार हार हीरक सी सोहति।

काहिरा से सात मील दक्षिण में गिज़े' नामक स्थान है जहाँ विश्व विख्यात पिरामिड हैं। बस में बैठकर उधर हो चल पड़ा। शहर से निकलते ही गरम रेत और सूखी हवा के थपेड़े लगने लगे। मैंने सोचा—बीच सहारा में तपती रेत की आँधियों में कैसी गुजरती होगी?

गिज़े से पिरामिड डेढ़ मील पर है। बस से उतरते ही गधे और ऊँट वालों ने घेर लिया। गरमी के कारण यात्री बहुत कम थे। अतः सभी अपनी ओर खींचा तानी कर रहे थे। अँगरेजी फ्रेंच और इतालियन के टूटे फूटे शब्दों में वे अपनी अपनी सवारी की प्रशंसा कर रहे थे। उन वाक्यों के बीच हिन्दी को बहुत अच्छा सुनकर मुझे बहुत अच्छा लगा। मैं उनके माल भाव से चौकन्ना था क्योंकि इस विषय में पहले पढ़ चुका था।

---

* मैंने मिस्र की यात्रा सन १९५२ में की थी। शाह फारूक उन दिनों मिस्र में शाह थे।

सोच रहा था कि गधे पर बढ़ूँ या ऊँट पर। गधे की सवारी में किफायत, ऊँट की सवारी में ज्यादा खर्च। गधों का लेखा—कान लटकाए खड़े हैं। गधे की सवारी को अपन यहाँ अच्छा नहीं मानते, लिहाजा 'रेगिस्तान का जहाज' ही उपयुक्त रहेगा। बड़ी हुज्जत के बाद अब्दुल से ऊँट का किराया तय हुआ तीन रुपये। यहाँ एक बात देखी कि जैसे हमारे यहाँ आम तौर पर हर नेपाली 'बहादुर' है उसी तरह हर मिस्री 'अब्दुल' है।

रास्ते में अब्दुल ऊँट की नकेल थाम चला जा रहा था। ऊँट की चाल सुस्त पर अब्दुल की जबान चुस्त। टूटी-फूटी अंगरेजी में अपनी, अपने खानदान की और अपने ऊँट की तारीफ। कान खड़े हो गए जब मुझे यह बतलाया गया कि मैं उस कमान पर बैठा हुआ हूँ जिस पर सुप्रसिद्ध जर्मन जनरल रोमल बैठ चुका था। इतना ही नहीं, रोमल को हराकर जब जनरल मांटगोमरी काहिरा आया तो उसने भी तमाम ऊँटों में से इसी को पसंद किया था।—' अँगरेज बुरे हों या भले, होते हैं कद्रदाँ। बस आपके यहाँ के कश्मीर के महाराजा ने भी इसकी चाल से खुश होकर १०० रुपये तो बतौर बख्शीश ही दिए थे।

एक तो सिर पर कड़कड़ाती धूप दूसरे कमाल की चाल। परेशानी हो रही थी। उस पर जनाब अब्दुल ने फरमाया 'यह शुक्र समझिये कि आपको उन ठगों से बचाने के लिए मैंने यों ही तीन रुपये कह दिये, वरना दस में कम में तो कमाल नखरे ही करके थामने देता।' उसकी बकवास पर खीझ तो बहुत आ रही थी किन्तु बियाबान 'सहारा' में उसके दैत्याकार डील-डौल को देखकर उसे चुप कराने के बजाय खुद ही चुप्पी साधे रहने में भलाई समझी।

हाल बेहाल हो रहा था पर पिरामिड के पास पहुँचने पर शान्ति मिली। ऐसी समाधियाँ संसार में अन्यत्र कहीं नहीं हैं। इनका निर्माण प्रायः ६,००० वर्ष पूर्व हुआ था। कितने विशाल हैं ये! इसका अनुमान इस तरह लगाया जा सकता है कि खूफू के पिरामिड में जो इन तीनों में सबसे बड़ा है, लगभग तीस लाख टन बड़ी-बड़ी शिलाएँ लगी हैं जिनका कुल वजन ८॥ करोड़ मन कूता गया है। मिस्र के शासक इन पिरामिडों को इसलिए बनवाते थे कि उनकी मृत्यु के बाद वे इनमें समाधिस्थ कर दिये जायें। शव के साथ उनकी प्रिय वस्तुएँ—अलंकार, स्वर्ण पात्र, राज्य चिह्न इत्यादि इनमें रखे जाते थे। इनमें से जो ठोस स्वर्ण के बने बड़े वजनी किस्म के अलंकार, पात्र अथवा राज्य चिह्न हैं उनको अब मिस्र के राष्ट्रीय संग्रहालय में रख दिया गया है। इनकी दीवारों पर राजा के जीवन की प्रमुख घटनाओं एवं कीर्ति के चित्र उत्कीर्ण किये जाते थे एवं उनका बखान भी

रहता था। पत्थरों पर खोदे हुए चित्रों के साथ कहीं-कहीं रंग का भी प्रयोग किया गया है। राजा का शव रासायनिक लेप लगाकर एक विशेष प्रकार के ताबूत में बंद कर लिया जाता था। इस शव को 'ममी' कहते हैं। इस ताबूत को पत्थर के एक बड़े बक्स में रख लिया जाता था। इस पर राजा की प्रतिमूर्ति उसका राज्य-काल आदि अंकित कर दिया जाता था। ममी में रखे हुए शव सड़ते-गलते न थे। लेप का रासायनिक नुस्खा क्या था, इसका पता आज तक नहीं चला।

पिरामिडों का निर्माण अत्यन्त कष्ट एवं व्यय-साध्य था। हजारों गुलाम बड़े-बड़े पत्थर सैकड़ों मील दूर से लम्बी रस्सियों से खींचकर लाते थे दहकती बालू की आँधी में जहाँ पानी का नाम नहीं। कितनी जानें गयी होंगी, यह कल्पनातीत है। इसके पास ही स्फिंक्स (Sphinx) की विशाल मूर्ति है जिसकी ऊँचाई १८९ फुट है। इसका सारा शरीर सिंह का परन्तु सिर मनुष्य जैसा है। इस ढंग की मूर्ति बनाने में राजा की शक्ति एवं पराक्रम के दिग्दर्शन की भावना रहती थी। अपनी कीर्ति और यश को अमिट रखने की आकांक्षा मनुष्य में कितनी अधिक रहती है!—पिरामिड, कुतुबमीनार और ताजमहल इसी के तो प्रयत्न मात्र हैं।

पिरामिड से वापस बस-स्टैण्ड पर आया। दो बज रहे थे। अब्दुल को तीन रुपये देने लगा, तो वह झगड़ा करने पर उतारू हो गया। हाथ हिलाते हुए चिल्लाकर कहने लगा, "दस की बात हुई, देते हैं तीन रुपये!" शोर सुनकर दूसरे ऊँट वाले भी वहाँ आ गए। आश्चर्य तो यह था कि जाते समय जहाँ सभी आपस में उलझ रहे थे, अब सब उसी की तरफदारी करने लगे। खैर, किसी प्रकार दूसरे लोगों के बीच-बचाव से पाँच रुपये में छुट्टी मिली। मैं सोचने लगा पूर्वी देशों में हम लोग अपने इस व्यवहार के कारण पर्यटन व्यवसाय को कितनी हानि पहुँचाते हैं और साथ ही विदेशियों की नजरों में अपने राष्ट्र को नीचा गिराते हैं।

गिजे में बस पर बैठकर शहर लौट रहा था। मन में विचार उठे—नील के बुजुर्ग और ऊँट वाला अब्दुल—दोनों ही तो मिस्र के हैं। शिक्षा और संस्कार मनुष्य मात्र को कितना प्रभावित करते हैं। जिस देश में इन पर अधिक ध्यान दिया जाएगा वहाँ अब्दुल कम मिलेंगे। खिड़की से बाहर देख रहा था—पिरामिड ओझल हो चुके थे। कितना श्रम, धन और समय लगाया गया था इन

पर। सदियाँ गुजर चुकी हैं, जमाना कहाँ से कहाँ आ गया, पर ये खंड अपने युग की गवाही दे रहे हैं।

वाहर आकर नाश्ता किया। संग्रहालय देखने गया। दरवाजे पर 'गाइडों' ने घेर लिया। मैंने किसी को साथ नहीं लिया, क्योंकि समय कम रहने के कारण सरसरी तौर पर ही देखना चाहता था। मिस्र का यह संग्रहालय बहुत बड़ा नहीं है। संग्रह भी उतना विविध नहीं, जितना कलकत्ता म्युजियम का है। मेरी दिलचस्पी मिस्र की शिल्पकला, पुरातत्त्व और इतिहास में थी। अतः उन्हीं को देखने लगा। मिस्र के प्रागैतिहासिक एवं प्राचीन काल की बहुत सी वस्तुएं देखीं किन्तु मैंने अनुभव किया कि उनकी बारीकियाँ समझना मेरे लिए दुरूह था। अच्छा होता कि इजिप्टालाजी (मिस्र के पुरातत्त्व की विद्या) का थोड़ा सा ज्ञान प्राप्त कर लेता अथवा गाइड साथ ले लेता।

यहां ममी में रखा हुआ तुतेनखामन का शव देखा। उसकी बहुमूल्य वस्तुएं भी यहीं सुरक्षित हैं। यह सम्राट आज से तैंतीस सौ वर्ष पूर्व हुआ था। धन के लोभ से पिरामिडों की लूट-खसोट सैकड़ों वर्ष तक चलती रही। परन्तु रेत के नीचे दब जाने के कारण तुतेनखामन का पिरामिड सुरक्षित रह गया। पम्पियाई की वस्तुएं भी इटली में इतनी ही अच्छी हालत में स्खल को मिली थीं, परन्तु वे इनसे चौदह सौ वर्षों के बाद की थीं।

अन्य वस्तुओं में प्राचीन अस्त्र-शस्त्र, चित्र, अलंकार, लकड़ी व वस्त्र इत्यादि की बनावट प्राचीन मिस्रवासियों की परिमार्जित रुचि का परिचय दे रही थीं। तेईस सौ वर्ष पहले के सोने चाँदी के कुछ बर्तन भी रखे जो जिन हुए कमल के आकार के थे। इन वस्तुओं को देखकर पता चलता है कि भारत की तरह यहां भी संभवतः सूर्य, अग्नि, सर्प, और गरुड़ की पूजा देवी देवताओं के रूप में होती थी। रामशेष (Ramses) नामक सम्राट भी यहां हुए थे। ऐसा लगता है कि सुदूर अतीत में हमारे देश से मिस्र का घनिष्ठ सम्बन्ध रहा होगा।

संग्रहालय में अस्वान के बाँध का एक मॉडल भी देखा। याद आया कि सुबह मिस्री बुजुर्ग ने कहा था कि पर्यटक पिरामिड देखने तो आते हैं पर अस्वान का बांध कोई नहीं देखता जिसने मिस्र की काया पलट की है। सचमुच ही, यह बांध आधुनिक मिस्र का एक आश्चर्य है। इसका निर्माण १८९८ में आरम्भ किया गया और १९०२ में जाकर पूरा हुआ था।

सौभाग्य से यहां काहिरा विश्वविद्यालय के एक प्रोफेसर से भेंट हो गयी।